बाल विज्ञान पत्रिका मई 2014

चकमक

किस्से बादल के, पतंग से सुनते हैं
हम सपने बुनते हैं, तो तारे सुनते हैं

मूल्य ₹ 30

किस्से बादल के…

किस्से बादल के
पतंग से सुनते हैं
हम सपने बुनते हैं
तो तारे सुनते हैं

आसमान पर आने-जाने
रस्ते चलते हैं
लोग खड़े रहते हैं
सारे रस्ते चलते हैं।

रस्तों के सब अगल-बगल के
झाड़ भी चलते हैं
उनकी देखा-देखी कुछ
पहाड़ भी चलते हैं।
वहाँ वो सब उड़ लेते हैं
जो उड़ना चुनते हैं

किस्से बादल के…

- सुशील शुक्ल

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 332 मई 2014

4 बोली रंगोली
6 एक था हाजी एक था नाजी
8 झूठ बोलना पाप है?
9 अण्डों की सुनहरी पेटी से झरते नन्हे प्रेइंग मेंटिस
10 एक चिट्ठी
12 चुम्बकीय वस्तुओं की पहचान
14 शेरपा....
18 जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे...
20 काली चिड़िया, सूअर और बचपन - मराठी फिल्म फैन्ड्री
24 मेरा पन्ना
27 फेसबुक से...
28 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की लघुकथाएँ
30 अनोखा चित्रकार
31 वो नन्हा धनेष
32 पीछे छूटा हुआ भाई
34 चिड़िया के बच्चे
41 बोली रंगोली
42 माथापच्ची
43 चित्रपहेली
44 रँगीली-छबीली बकरियाँ

हाशिए के चित्र
अरविन्द गुप्ता की पुस्तक
***थम्ब्स डाउन** से साभार*

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

आवरण चित्र
चित्र: निधि सक्सेना

सम्पादकीय सलाहकार
रेक्स डी रोज़ारियो

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

इस अंक में

32

स्कूटर देखने में
बहुत अच्छा था।
उसे पहले-पहल
चलाते हुए मिली
आज़ादी की खुशी
अब तक खत्म
नहीं हुई थी।

6

हाजी बाबा बोले,
"आप मेरी मुर्गियों को जानते नहीं।
एक नम्बर की हलकट और बेईमान हैं।"

28

चलो
मेरे समझदार बच्चे,
मुझे तो तुम
बड़े मज़े में
ले चल
सकते हो?

9

इसके नाम का अर्थ है
हाथ जोड़कर प्रार्थना करता महात्मा।

20

जाब्या को एक चमकीली, काली,
छोटी-सी चिड़िया की तलाश है।
जो हमारे साँवले,
छोटे-से जाब्या को
गोरा कर देगी।

4-5-41

भरी रहती है अन्दर से
कलम मुँह बन्द रखती है
मगर सब बोल देती है
वो जब कागज़ को चखती है
- गुलज़ार

विप्रो एप्लाइंग थॉट इन स्कूल्स के वित्तीय सहयोग से विकसित

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
मिताली अहीर
वरुण ग्रोवर
मिहिर
प्रभात
कमलेश यादव

सदस्यता शुल्क

एक प्रतिः	30.00	(व्यक्तिगत)
	50.00	(संस्थागत)
वार्षिकः	300.00	(व्यक्तिगत)
	500.00	(संस्थागत)
तीन सालः	800.00	(व्यक्तिगत)
	1350.00	(संस्थागत)
आजीवनः	4000.00	(व्यक्तिगत)
	6000.00	(संस्थागत)

सभी डाक खर्च हम देंगे।
चन्दा (एकलव्य के नाम से बने)
मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं।
भोपाल के बाहर के चैक में
80.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर,
भोपाल, म.प्र. 462 016
फोनः (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्सः (0755) 2551108
e mail - chakmak@eklavya.in
e mail - circulation@eklavya.in
www.chakmak.eklavya.in
www.eklavya.in

पहले पाँच चित्र

भरी रहती है अन्दर से
कलम मुँह बन्द रखती है
मगर सब बोल देती है
वो जब कागज़
को चखती है

गुलज़ार

दोस्तो, शुक्रिया! इतने मन से इस कॉलम में भागीदारी के लिए। तुम्हारे चार सौ से ऊपर चित्र मिले। गुलज़ार साब के पसन्दीदा पाँच चित्र यहाँ पेश हैं। इन पाँचों चित्रकारों को उपहार में चकमक की एक साल की सदस्यता मिलेगी। सत्रह चित्र और भी हैं जो बहुत सधे हैं। इन्हें तुम पेज 41 पर देख सकते हो।

शेरॉन, आठवीं, विश्वस विद्यालय, गुड़गाँव

जून की पंक्तियाँ हैं ..

यहीं खड़ा था दोस्त मेरा
मेरी कॉपी में लिखता था
आँख खुली तो कहीं नहीं है
बन्द आँखों से दिखता था

गुलज़ार

मेहा यादव, पाँचवीं,
डीएवी, गुड़गाँव

बोलीरंगोली

भाव्या जिन्दल, आठवीं, डीपीएस लुधियाना, पंजाब

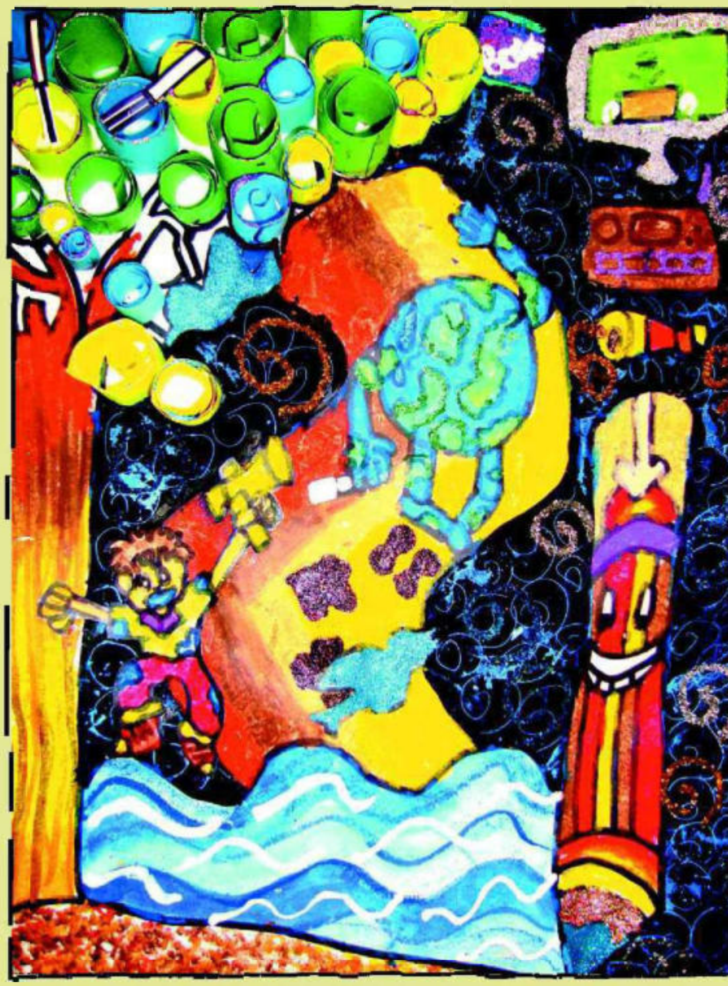

अक्षय तलरेजा, छठी, प्रेसीडियम स्कूल, दिल्ली

गायत्री, चौथी, डीएवीपीएस, गुड़गाँव

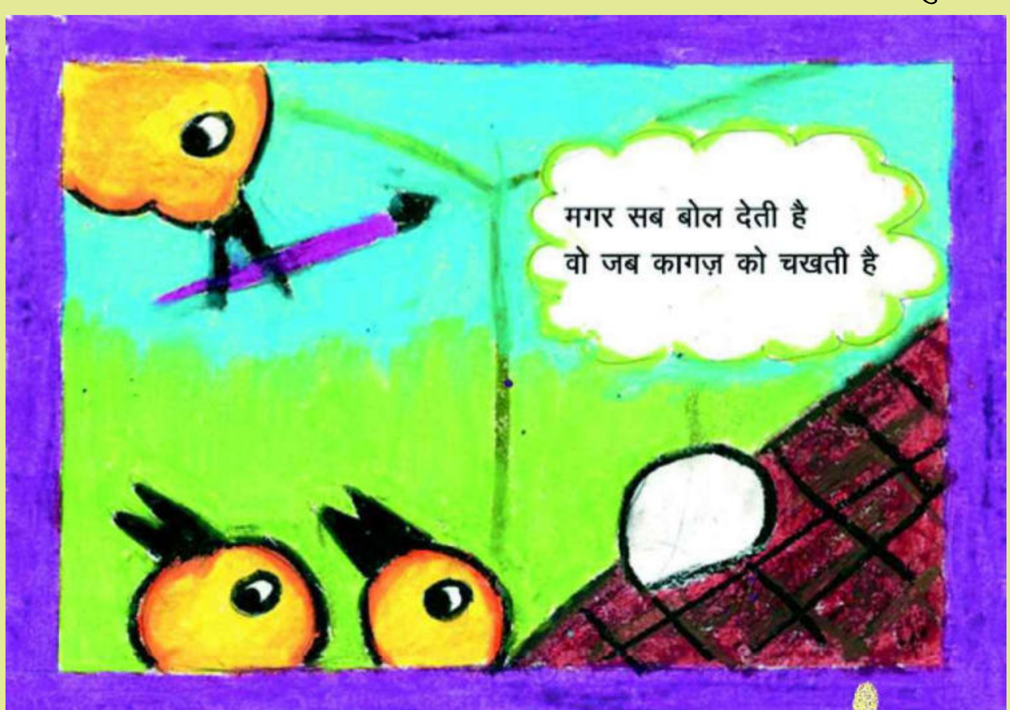

हो सकता है बड़े तुम्हें इसके अर्थ बताएँ। उनके अर्थ सुनो-समझो पर चित्र अपने मन का ही बनाओ...। कोशिश करना कि तुम्हारा चित्र हमें 14 मई तक मिल जाए। चित्र के साथ अपना पता, कक्षा, फोन नम्बर ज़रूर लिखना। हमारा पता है -

चकमक, एकलव्य,
ई-10, शंकर नगर, शिवाजी नगर,
भोपाल - 462 016
(फोन - 09425010115)
chakmak@eklavya.in

एक था हाजी एक था नाजी

स्वयं प्रकाश

धनुर्विद्या

राजकुमार नाजीराज धनुर्विद्या सीखना चाहते थे। इसके लिए वे अपने समय के सबसे बड़े धनुर्धर आचार्य हाजीश्वर के पास गए जो जंगल में रहते थे।

राजकुमार ने कहा, "मैं आप जैसा महान धनुर्धर बनना चाहता हूँ। धनुर्विद्या सीखने में कितना समय लगेगा?"

आचार्य ने कहा, "सीखने के लिए तो पूरी उम्र भी कम है। देखा जाए तो मैं भी अभी सीख ही रहा हूँ। फिर भी ठीक-ठाक धनुर्विद्या सीखने के लिए कम से कम पूनम के छह चाँद तो लगेंगे ही।" राजकुमार ने कहा,

"मेरे पास इतना समय नहीं है। जितना जानते हो मुझे पन्द्रह दिन में सिखा दो। यह राजाज्ञा है।"

आचार्य ने कहा, "ठीक है, कल से आ जाओ।"

दूसरे दिन सुबह राजकुमार अपना धनुष-बाण लेकर आचार्य के पास पहुँच गया।

आचार्य बोले, "धनुष-बाण यहीं रख दो। आज हम जंगल में घूमेंगे। देखेंगे कहाँ पक्षियों ने घोंसले बनाए हैं, कहाँ तीतरों ने अण्डे दिए हैं, कहाँ सियारों की माँद है, कहाँ दलदल है, कहाँ खाई।"

राजकुमार ने कहा, "वह सब मुझे मेरे गुप्तचरों ने बता दिया है। उसमें समय नष्ट करने की कोई ज़रूरत नहीं। आप तो प्रशिक्षण शुरू करो।"

आचार्य ने कहा, "जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। आओ। देखो। ये बड़ा-सा पीपल का पेड़ देख रहे हो? इस पर सैकड़ों चिड़ियाँ बैठी हैं। इनमें वह जो नीली चिड़िया है न बड़ी चोंचवाली, उसे तीर मारकर गिरा दो। वह छोटी चिड़ियों के अण्डे फोड़कर खा जाती है।"

राजकुमार ने तीर चलाया।

एक भी चिड़िया न गिरी, न उड़ी।

आचार्य ने धनुष-बाण ठीक से पकड़ना सिखाया और बोले, "फिर कोशिश करो।"

इस बार राजकुमार का तीर पेड़ की डाली पर लगा और सारी चिड़ियाँ उड़ गईं।

"ये तो उड़ती हैं!" राजकुमार ने कहा।

"कोई बात नहीं। चलो, कल देखेंगे।" आचार्य बोले।

अगले दिन उस पेड़ पर सैकड़ों चिड़ियाँ बैठी थीं लेकिन कोई भी उड़ नहीं सकती थी। चिड़ियाँ नकली थीं।

आचार्य ने कहा, "इनमें से किसी को भी निशाना लगाकर गिरा दो।"

(शेष भाग पेज 23 पर)

मुर्गी दाना और इंस्पेक्टर नाजी

चित्रः अतनु राय

हाजी बाबा अपने मुर्गीखाने में टहल रहे थे। वहाँ मुर्गियों की संख्या सौ के पार पहुँच गई थी।

अचानक उन्हें फूड इंस्पेक्टर नाजी अपनी तरफ आता दिखा।

दुआ-सलाम हुई।

इंस्पेक्टर नाजी ने पूछा, "तुम अपनी मुर्गियों को क्या खिलाते हो?"

हाजी बाबा ने कहा, "साफ की हुई धुली हुई चने की दाल और किशमिश। कभी-कभी काजू के टुकड़े भी डाल देते हैं।"

इंस्पेक्टर बोला, "क्या बोला? चने की दाल? और काजू-किशमिश? ये तो इंसानों को भी नहीं मिलते और तुम मुर्गियों को खिला रहे हो? तुम्हारा तो चालान बनाना पड़ेगा। पाँच सौ रुपए निकालो वरना..."

हाजी बाबा ने चुपचाप पाँच सौ का नोट इंस्पेक्टर को पकड़ा दिया।

इंस्पेक्टर चला गया।

लेकिन अगले हफ्ते इंस्पेक्टर फिर आया। पूछा, "अच्छा ये बताओ तुम अपनी मुर्गियों को क्या खिलाते हो?"

हाजी बाबा बोले, "हमने तो अपने सारे पड़ौसियों से कह रखा है कि अपने घर का कूड़ा-कर्कट और जूठन हमारे मुर्गीबाड़े में डाल जाया करें। बस, उसी को ये मुर्गियाँ छाँट-छाँटकर खा जाती हैं।"

"हाय हाय! तुम ऐसा करते हो? और फिर इनके अण्डे बेच देते हो? तुम्हारा तो चालान काटना पड़ेगा। तुम तो पब्लिक को बीमार करोगे! निकालो पाँच सौ रुपए वरना ..." इंस्पेक्टर बोला।

हाजी बाबा ने पाँच सौ रुपए दिए जिन्हें लेकर इंस्पेक्टर चला गया।

अगले हफ्ते इंस्पेक्टर फिर आया और बोला, "एक बात बताओ! तुम अपनी मुर्गियों को खिलाते क्या हो?"

हाजी बाबा बोले, "आप मेरी मुर्गियों को जानते नहीं। एक नम्बर की हलकट और बेईमान हैं। तो हम तो इनको हर हफ्ते पाँच सौ का नोट पकड़ा देते हैं इन्हें जो अच्छा लगता है खाकर आ जाती हैं।"

झूठ बोलना पाप है?

इन्द्राणी रॉय

झूठ बोलना पाप है नदी किनारे साँप है...

बचपन में जब हमें लगता था कि कोई झूठ बोल रहा है तो हम उसे इसी तरह से डराया करते थे। हमें भी इसी तरह डराया जाता था। ठीक भी है झूठ बोलना कोई अच्छी बात नहीं है। घर में माँ-बाप और स्कूल में टीचर से झूठ बोलने पर काफी डाँट पड़ती है। पर एक मज़ेदार बात बताएँ? झूठ बोल पाना मानव भाषा की खासियत है। इसे गुण मानें या अवगुण पर यह एक ऐसी चीज़ है जो मानव भाषा को पशु-पक्षियों की भाषा से अलग करती है।

अब मान लो तुम्हारा कोई पालतू कुत्ता है। जब तुम स्कूल से आते हो तो वो खुशी से उछलने और भौंकने लगता है। यह बताने के लिए कि तुम्हें देखकर उसे कितनी खुशी हुई। वो शायद ही यह कह रहा होगा कि जब मैं दोपहर को टहलने निकला तो मुझे नए दोस्त मिले और इसलिए मैं खुश हूँ। और अगर तुम्हें देखकर उसे खुशी न हुई होगी तो यह बिलकुल ही सम्भव नहीं है कि वह झूठमूठ ही तुम्हें दिखाने के लिए खुशी से भौंक रहा होगा।

चलो तोते जैसे पक्षी की बात करते हैं। तुम्हें लग सकता है कि तोते बोल सकते हैं। जिस घर में वह रहता है वहाँ रहनेवालों के नाम उसे याद होते हैं। वो उन्हें देखकर उनको नाम से बुलाता है। कुछ-कुछ शब्द और छोटे-छोटे वाक्य उसे सिखाए जाएँ तो वो उन्हें बोलने लगता है। वह खुद से कोई नए वाक्य नहीं गढ़ पाता है। वो रटी-रटाई बात ही कहता है इसीलिए उसे रट्टू तोता बोला जाता है।

हाँ, यह सही है कि पशु-पक्षी आपस में बातचीत तो ज़रूर करते हैं। भले ही कुत्ते का भौंकना हुआ या चिड़ियों का चहकना हुआ! इसका कुछ मतलब तो होता ही होगा! ज़रूर होता है। पर वे उसी समय की घटना के बारे में ही बात करते हैं। दो दिन पहले जो हुआ था या दो दिन बात जो होनेवाला है इसके बारे में बात करने की क्षमता सिर्फ मनुष्य के पास है।

माना जाता है कि मधुमक्खियों की आपस में बातचीत करने की क्षमता काफी विकसित है। वे एक-दूसरे को बता पाती हैं कि शहद का स्रोत कहाँ हैं। उस जगह की ठीक-ठीक दिशा भी बता पाती हैं जिससे बाकी सारी मधुमक्खियाँ वहाँ पहुँच सकें। तो क्या हम मान लें कि मधुमक्खियों कि भाषा इंसानी भाषा जैसी है? नहीं। सोचो अगर एक मधुमक्खी का झगड़ा दूसरी मधुमक्खी के साथ हो जाता है तो क्या वो शहद की गलत दिशा बताकर उसे किसी और जगह पहुँचा सकती है! लगता तो नहीं है।

यानी झूठ सिर्फ मनुष्य ही बोल सकता है। मानव भाषा की यह एक बड़ी खासियत है। पर झूठ बोलने को पाप समझा जाता है। है न यह अजीब बात?

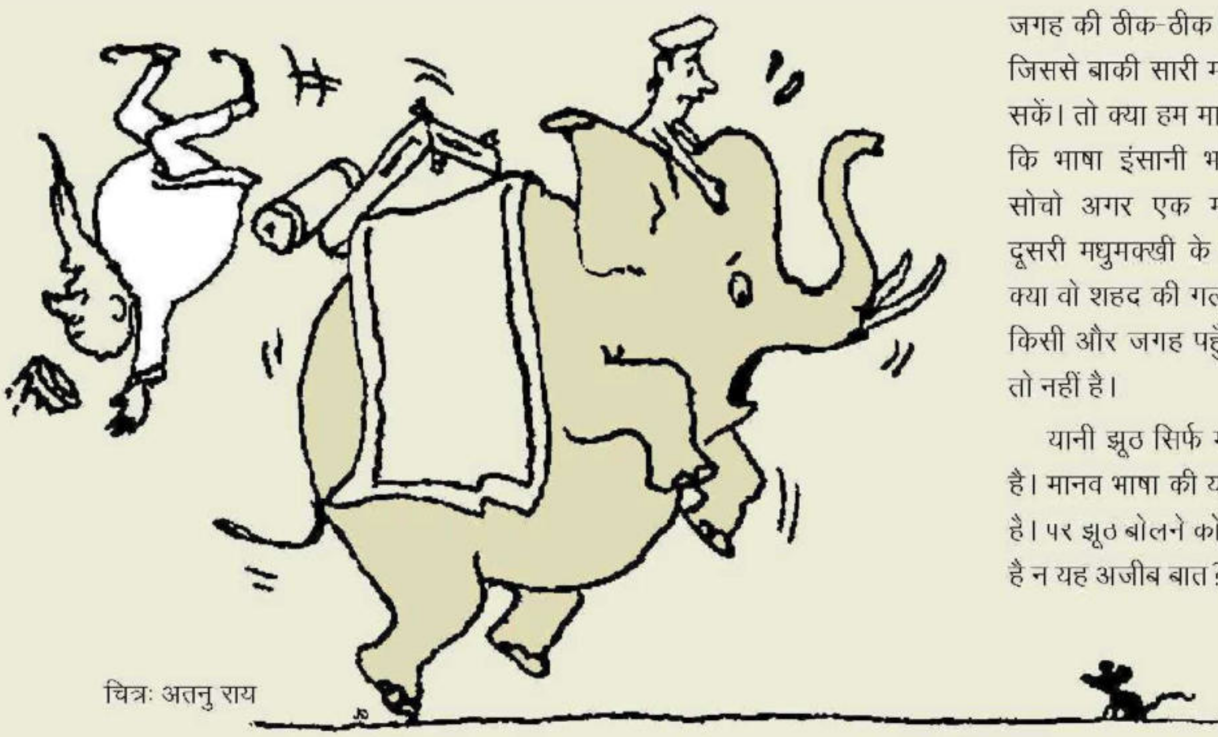

चित्रः अतनु राय

इसके भोजन में शामिल हैं तितलियाँ वगैरा

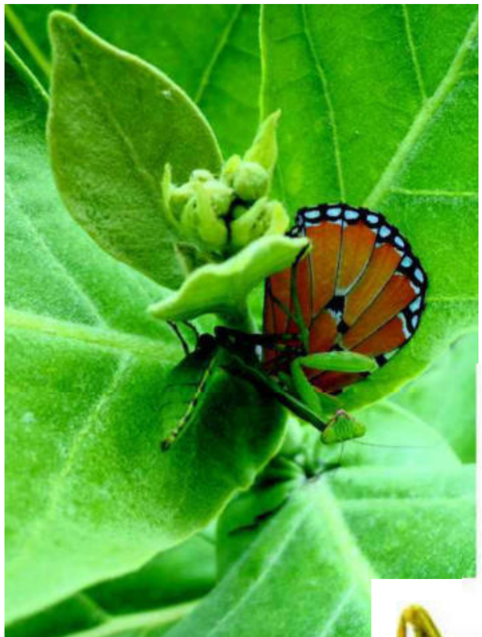

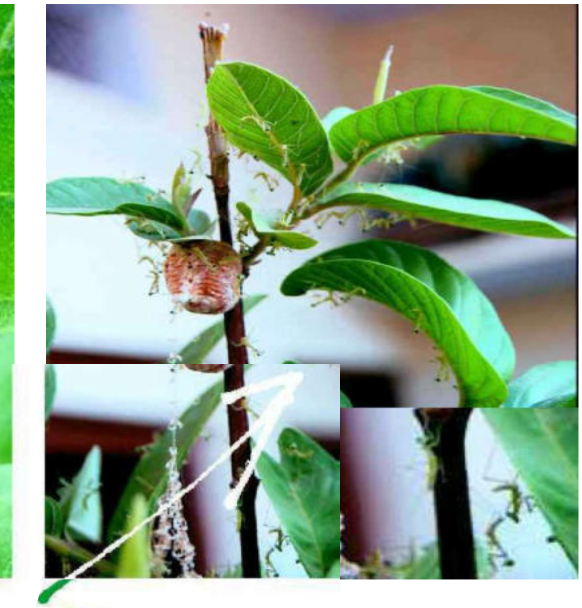

अण्डों की सुनहरी पेटी से झरते नन्हे प्रेइंग मेंटिस

डॉ. किशोर पँवार

यह सुन्दर-सी रचना अकसर बाग-बगीचों में पेड़-पौधों की टहनियों से चिपकी मिल ही जाती है। इसकी बनावट देख मुझे घरों के काँच को साफ करने के लिए इस्तेमाल किया जानेवाला समुद्रफेन याद आता है।

दरअसल यह रचना प्रेइंग मेंटिस नाम के एक कीट की अण्डा रखने की जगह है। जब यह बनती है तब झागनुमा होती है। बाद में हवा लगने पर यह सख्त हो जाती है। इसे उथीका कहते हैं। इसमें 10 से 400 तक अण्डे जमाए जा सकते हैं। इसमें वे सुरक्षित रहते हैं।

प्रेइंग मेंटिस का जीववैज्ञानिक नाम है – मेंटिस रिलिजिऔसा। इसका अर्थ है हाथ जोड़कर प्रार्थना करता महात्मा। इसी से मिलते-जुलते नाम का एक पेड़ है – फादकस रिलिजिऔसा (हमारा जाना-पहचाना धार्मिक पीपल)। रिलिजिअस यानी धर्म सम्बन्धी। जब उथीका में भरे अण्डे फटते हैं तो उससे सैकड़ों की संख्या में छोटे-छोटे मेंटिस के बच्चे (निम्फ) निकलते हैं। निम्फ और वयस्क (adult) में मोटे तौर पर आकार का ही फर्क होता है। पंख और जननांग बाद में विकसित होते हैं।

निम्फ में निर्मोचन (मोल्टिंग - किसी जीव का समय-समय पर अपने बाहरी अंगों को गिराते जाना) पाँच से दस बार तक होता है। वयस्क की आगे की टाँगें लम्बी होती हैं और इस तरह मुड़ी होती हैं कि शिकार के इन्तज़ार में बैठा प्रेइंग मेंटिस अपने दोनों हाथ जोड़े प्रार्थनारत लगता है। टाँगों की भीतरी सतह पर काँटे भी बने होते हैं जो शिकार को मज़बूती से पकड़े रहते हैं। इसका सिर तिकोना होता है जिसे यह 180 डिग्री कोण पर मोड़ सकता है। इसके सिर को घूमते देखना बड़ा मज़ेदार होता है। यही एकमात्र कीट है जिसमें ऐसा गुण है।

प्रेइंग मेंटिस अपने शिकार को ज़िन्दा ही कुतर-कुतरकर बड़े आराम से चट कर जाता है। इसके भोजन में शामिल हैं मोथ (पतंगें), ग्रासहॉपर (कच्छीघोड़े), मक्खियाँ, झिंगुर और तितलियाँ। यह एक तरह से हानिरहित और उपयोगी कीट है जो नुकसानदायक कीटों का सफाया कर इनका जैविक नियंत्रण करते हैं। प्रेइंग मेंटिस आमतौर पर 10 से 12 माह तक जीवित रहता है। अब जब भी तुम्हें मेंटिस की उथीका दिखाई दे तो उसे थोड़ी-थोड़ी देर में देखते रहना – न जाने कब उससे निम्फ की फौज किसी किले की दीवार-सी बाहर निकली दिखाई दे जाए।

एक चिट्ठी

निर्मल सेनगुप्त

बांग्ला से अनुवाद: यायावर

प्रिय रिमिलिया,

तुम्हारा भेजा लेख पत्रिका में छप गया। अब ज़्यादा लोग इसे पढ़ सकेंगे। यह खुशी की बात है। दुख यही है कि मैं इसे पढ़ नहीं सकता। मगर साजेदा ने मुझे पढ़कर सुनाया। तब लिख न सका। अब लिख रहा हूँ। रात को लेटे-लेटे सोच रहा था कि क्या लिखूँ? तभी रात के अँधेरे में याद आई एक और रात की बात। वही लिख रहा हूँ।

वह 1932 का साल था। मैं तब इंजीनियरिंग पास कर एक कारखाने में काम कर रहा था। सीमेन्स ब्रदर का बहुत बड़ा कारखाना था। वहाँ टेलीफोन के औज़ार बनते थे। शोधकार्य भी होता था। मैं वहाँ हर विभाग में एक या दो सप्ताह रहकर काम सीख रहा था। कारखाना लंदन शहर से 25 मील पूर्व में था। मैं पास ही के चाल्टन नामक इलाके में रहता था। वहाँ लोगों के साथ अच्छा परिचय था मगर कोई दोस्त नहीं था। इसलिए रविवार की छुट्टी बिताने दोस्तों के पास लंदन चला जाता था। वहाँ उनके साथ गपशप करता, पढ़ता, विभिन्न विषयों पर चर्चा होती और फिर देर रात की आखिरी बस से घर लौटता।

एक दिन दोस्तों से बतियाते बहुत देर हो गई थी। आखिरी बस भी चली गई थी। तो पैदल ही चाल्टन जाना तय किया। तभी एक ट्राम उसी दिशा में जाती दिखी। मैंने दौड़कर उसे पकड़ा। ट्राम लोगों से भरी थी। बैठने की जगह न थी। मैं रॉड पकड़कर खड़ा रहा। पास ही एक आदमी खड़ा था। मुझे देख उसने पूछा, "क्या तुम विदेशी हो?" मैंने कहा, "हाँ।" वह बोला, "अकेले कहाँ जा रहे हो?" मैं बोला, "चाल्टन जाऊँगा।" चाल्टन था समुद्र तट के पास। वह बोला, "वो तो बहुत दूर है। ट्राम तो वहाँ जाएगी नहीं। यह तो केवल न्यू क्रॉस गेट तक ही जाती है। उसके बाद तुम क्या करोगे? मैंने कहा, "पैदल जाऊँगा।" वह बोला, "बीस मील से अधिक रास्ता है। बारह तो कब के बज चुके हैं। अब कोई गाड़ी नहीं मिलेगी।" मैंने कहा कि जाना तो पड़ेगा ही। कल कारखाने में बहुत काम हैं।

उसी समय ट्राम न्यू क्रॉस गेट के पास पहुँच गई। मैं उतर गया। मगर उसने मेरा साथ नहीं छोड़ा। एक और ट्राम जा रही थी। उस आदमी ने कहा कि वह न्यू क्रॉस तक जाएगी। वो मेरे साथ चलने लगा। मैंने उससे पूछा, "कहाँ जा रहे हो?" वह बोला, "न्यू क्रॉस।" एक बार फिर ट्राम पकड़ हम न्यू क्रॉस पहुँच गए। मैंने उससे कहा, "अच्छा तो अब मैं चलता हूँ।" वह बोला, "थोड़ा ठहरो।" यह कहकर वह एक अँधेरे गैरेज में गया और एक मोटर साइकिल निकाल लाया। मैंने पूछा, "यह क्या, तुम कहाँ चले? तुम कहाँ रहते हो?" उसने कहा, "मैं न्यू क्रॉस में रहता हूँ।" "तो फिर मोटर साइकिल क्यों निकाली?" मैंने पूछा। वह बोला, "ठहरो गाड़ी स्टार्ट तो कर लूँ।" फिर गाड़ी पर बैठ उसने मुझसे पीछे बैठने को कहा। मैंने पूछा, "क्या बात है? कहाँ जाओगे?" वह बोला, "तुमको पहुँचा आता हूँ।" मैंने कहा, "तुम क्या पागल हो गए हो? रात का एक बज रहा है। 20 मील दूर मुझे पहुँचाने जाओगे और फिर इतना ही लम्बा रास्ता वापस आओगे!" वह बोला, "तो फिर तुम क्या करोगे?" मैंने कहा, "मैं पैदल चला जाऊँगा। यदि रास्ते में कोई दूध की गाड़ी जाते देखी तो कुछ दूर तक उसमें चला जाऊँगा।" उसने

चुम्बकीय वस्तुओं की पहचान

उमेश चौहान

चुम्बक कुछ वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है या चुम्बक से वस्तु का स्पर्श कराते ही वह उसे चिपका लेता है। ये चुम्बकीय वस्तुएँ कहलाती हैं शेष अचुम्बकीय वस्तुएँ कहलाती हैं। यदि वस्तु बड़ी है या स्थिर है और वह चुम्बकीय क्षेत्र में है तब चुम्बक स्वयं उस वस्तु से चिपक जाता है।

चुम्बकीय तथा अचुम्बकीय वस्तुओं की पहचान चुम्बकीय सुई से भी की जा सकती है।

चुम्बकीय सुई पर कोई प्रभाव न पड़े तो वह वस्तु अचुम्बकीय है।

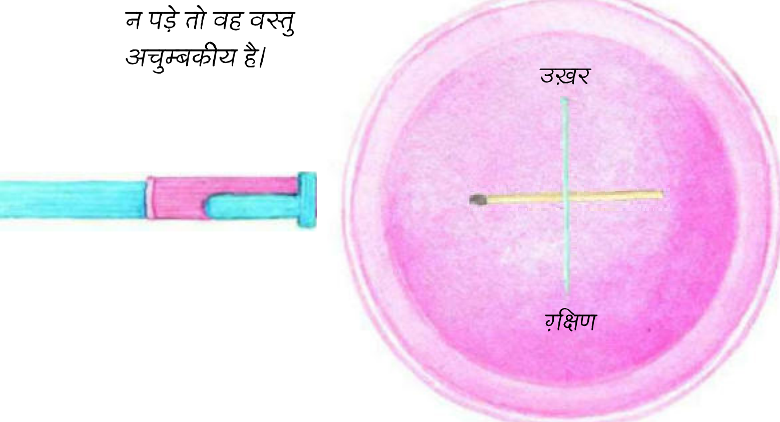

सुई वस्तु की ओर आकर्षित हो या खिंचे तो वस्तु चुम्बकीय है।

आवश्यक सामग्रीः चुम्बकीय सुई, प्लेट, पानी, काँच, रबर, चमड़ा, लोहा, ताँबा, प्लास्टिक आदि से बनी वस्तुएँ।

विधिः ऑलपिन से बनी चुम्बकीय सुई को पानी पर तैराओ। अब बारी-बारी से प्रत्येक वस्तु को सुई के एक सिरे के पास ले जाओ। यदि सुई वस्तु की ओर आकर्षित हो या खिंचे तो वस्तु चुम्बकीय है। यदि चुम्बकीय सुई पर कोई प्रभाव न पड़े तो वह वस्तु अचुम्बकीय है। अपने अवलोकनों के आधार पर चुम्बकीय तथा अचुम्बकीय वस्तुओं की सूची बनाओ।

विद्युत चुम्बक

हमने साधारण चुम्बक के कुछ गुणों की पहचान की है। क्या तुम जानते हो कि बिजली के तारों के आसपास भी विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र होता है। आओ इसे जानें।

आवश्यक सामग्रीः प्लेट, चुम्बकीय सुई, टॉर्च का सेल, साइकिल ट्यूब का छल्ला, ऑलपिन या लोहे की कील।

बिजली की पतली प्लास्टिक चढ़ी तार का लगभग 30 सेंटीमीटर लम्बा टुकड़ा लो। इसके सिरों से प्लास्टिक हटाकर साफ करो। इस टुकड़े को कील पर ऐसे लपेटो कि तार के फेरे आपस में सटे हों पर एक-दूसरे पर चढ़े न हों। चित्र को देखते हुए

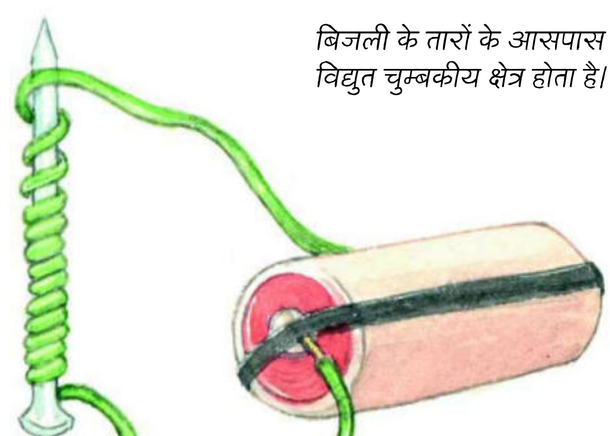

बिजली के तारों के आसपास भी विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र होता है।

मुझे गाड़ी पर बैठने को कहा। मैं उसके पीछे बैठ गया। बीस मील का रास्ता। थोड़ी बातचीत हुई। थोड़ी देर बाद उसने पूछा, "भगवान के बारे में कुछ सोचते हो?" मैंने जवाब दिया, "नहीं।" वह बोला, "जानते हो मैं क्या सोचता हूँ? इलेक्ट्रिसिटी (बिजली) ही भगवान है?" मैंने पूछा, "तुम क्या इलेक्ट्रिशियन हो?" वह बोला, "नहीं मैं मैकेनिक हूँ।" इसी तरह बतियाते हम चाल्टन पहुँच गए। मुझे उतारकर वह वापस जाने लगा। तो मैंने उससे पूछा, "तुम कहाँ काम करते हो?" वह बोला, "अभी मैं बेकार हूँ।" मैं हैरान रह गया। एक बेरोज़गार आदमी अपनी गाड़ी से एक विदेशी को इतनी रात को उसके घर पहुँचा गया।

मैंने उसे देने के लिए बैग से एक पाउण्ड निकाला तो वो बोला, "यह सब देना नहीं होगा।" मैं बोला, "पर क्यों?" उसने कुछ भी लेने से मना कर दिया। मैंने सोचा बाद में उसके घर जाकर दे आऊँगा। मैंने उसका नाम पूछा। उसने बताया, "जैक।" फिर पता पूछने पर बोला, "न्यू क्रॉस।" कहने लगा कि वहाँ मेरा नाम बताने पर कोई भी घर बता देगा। मैं समझ गया वह अपना ठीक पता नहीं बताएगा। न्यू क्रॉस शहर में तो एक हज़ार से ज़्यादा जैक नाम के व्यक्ति रहते होंगे। मैं अवाक होकर उसे देखने लगा। और वह मोटर साइकिल पर बैठकर चला गया।

1932 साल की घटना, आज (2002 ईस्वीं) सत्तर साल बाद भी मैं भूल नहीं सका। हो सकता है उसका नाम जैक न भी हो।

तुम्हारी माँ को नमस्कार कहना।

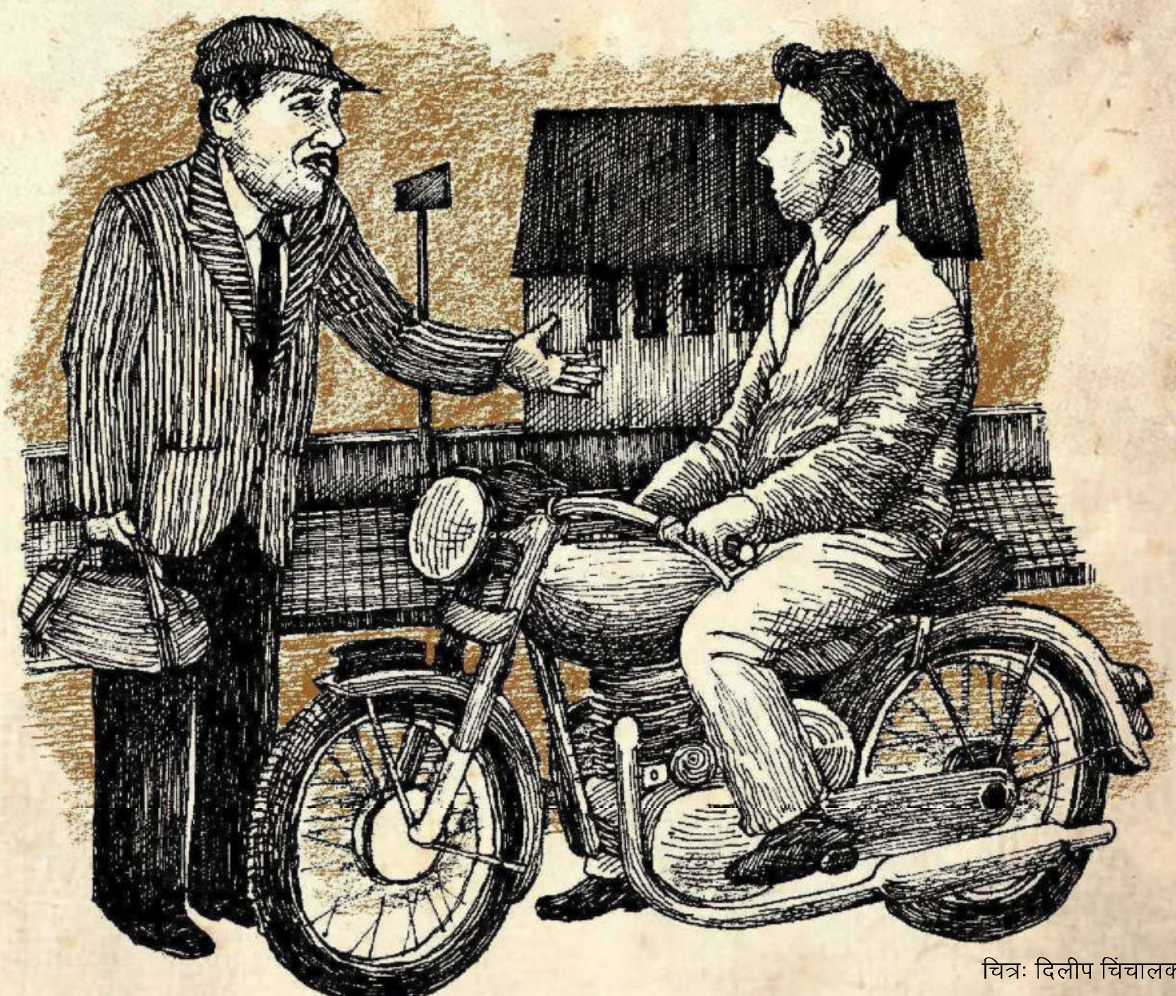

चित्रः दिलीप चिंचालकर

टॉर्च के सेल पर साइकिल ट्यूब का छल्ला चढ़ाओ। सेल के (+) सिरे पर बिजली के तार का एक सिरा छल्ले के नीचे फँसाकर जोड़ो। तार का दूसरा सिरा सेल के (-) सिरे पर स्पर्श कराने पर तुम देखोगे कि कील एक विद्युत चुम्बक की तरह कार्य करेगी। एक प्लेट में लोहे का बुरादा रखो। कील का एक सिरा लोहे के बुरादे पर रखो। तार के सिरों को सेल से जोड़ो। तुम देखोगे कि कील के एक सिरे पर बहुत सारा लोहे का बुरादा चिपक गया है। इस कील को कुछ ऊपर उठाओ। अब सेल से तार का एक सिरा हटा दो। कील से चिपका लोहे का बुरादा नीचे गिरता दिखेगा। सोचो सेल से तार हटाते ही बुरादा नीचे क्यों गिर गया!

विद्युत चुम्बक के ध्रुवों की पहचान

आवश्यक सामग्रीः चुम्बकीय सुई, विद्युत तार से लिपटी कील, रबर का छल्ला, सेल, प्लेट, पानी

विधिः चुम्बकीय सुई को पानी पर तैराओ। ध्यान देना कि सुई का कौन-सा सिरा उत्तर ध्रुव है और कौन-सा दक्षिण ध्रुव। अब कील पर लपेटी तार के सिरों को सेल से जोड़ो। कील का एक सिरा चुम्बकीय सुई के दक्षिण ध्रुव के पास लाओ। देखो क्या होता है – आकर्षण या विकर्षण? कील का यह सिरा घुण्डीवाला है या नुकीला है। सेल से तार का एक सिरा हटा लो।

अपने अवलोकन के आधार पर बताओ कि कील का नुकीला सिरा चुम्बक का उत्तर ध्रुव बना या दक्षिण ध्रुव।

कुण्डली को पलटकर कील को फिर से चुम्बकीय सुई के पास ले जाओ। कुण्डली के सिरे सेल से जोड़ो। इस बार चुम्बकीय सुई आकर्षित हुई या विकर्षित। अपने अवलोकन नोट करो। अब कील पर लिपटी तार का जो सिरा सेल के (+) सिरे से जुड़ा है उसे (-) सिरे से जोड़ो। यानी सिरे बदलकर सेल से जोड़ो। पिछला प्रयोग दोहराओ। देखो इस बार कील का चुम्बकीय ध्रुव बदला या वही है!

विद्युत चुम्बक के ध्रुवों का विज्ञान

पिछले प्रयोग में कील पर तार लपेटते समय तुम्हारा हाथ घड़ी के काँटे के घूमने की दिशा में तार लपेट रहा था या उसकी विपरीत दिशा में। कील को चुम्बक बनाने में तार के लपेटों की संख्या और उसमें बहनेवाली विद्युत धारा की दिशा का बड़ा महत्व है। यदि कुण्डली में धारा घड़ी के काँटे की दिशा में बह रही हो तो कुण्डली का जो सिरा सेल के (+) से जुड़ा होगा उस ओर कील में चुम्बक का दक्षिण ध्रुव बनता है। यदि कुण्डली में धारा घड़ी के काँटे की विपरीत दिशा में बह रही हो तो कुण्डली का जो सिरा सेल के (+) से जुड़ा होगा उस ओर कील में उत्तर ध्रुव बनता है। तुम कील पर दोनों तरह से तार लपेटकर कुण्डली बनाओ और इस तरह बने चुम्बक के ध्रुव बनने के विज्ञान को समझो।

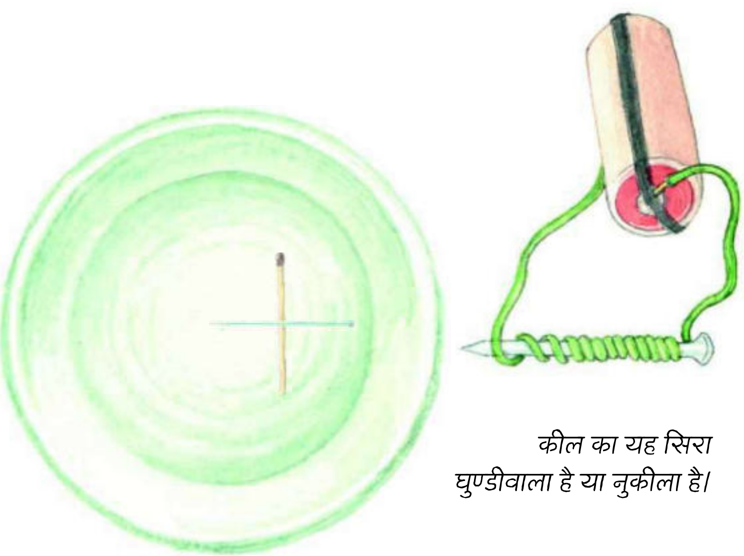

कील का यह सिरा घुण्डीवाला है या नुकीला है।

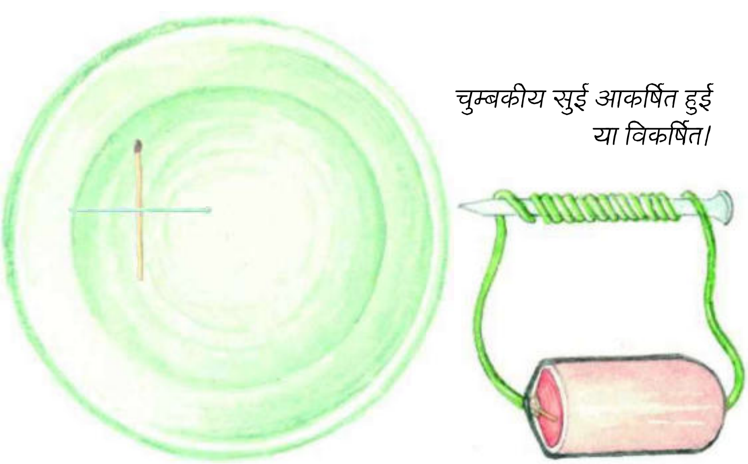

चुम्बकीय सुई आकर्षित हुई या विकर्षित।

चित्र : दिलीप चिंचालकर

पर्वतारोहियों की जीवनरेखा
शेरपा

उमेश ज़िरापे

माउण्ट एवरेस्ट हो या हिमालय की कोई भी चोटी। उस पर फतह हासिल करना हरेक पर्वतारोही के लिए गर्व की बात होती है। पर इस सफलता के पीछे हमेशा से एक शेरपा रहा है जो साए की तरह उसका साथ देता है। इन शेरपाओं के बारे में बता रहे हैं माउण्ट एवरेस्ट पर दो बार चढ़नेवाले उमेश ज़िरापे...

शेरपाओं के बारे में मैं तुम्हें बहुत सारी बातें बताऊँगा ही पर पहले एक रोमांचक किस्सा। यह पिछले साल के एवरेस्ट अभियान के दौरान घटा था-

18 मई 2012। गिरीप्रेमी एवरेस्ट यात्रा के सारे यात्री अपनी आखिरी चढ़ाई की तैयारी कर रहे थे। दल के हर सदस्य के साथ एक शेरपा मौजूद था। चढ़ाई के आखिर के दो दिनों में, शेरपा लगातार हर पर्वतारोही के साथ रहता है। 18 मई की रात को पर्वतारोही आनन्द माली और उसके शेरपा पासांग दावा ने दक्षिणी कोल के कैम्प-4 से अपनी चढ़ाई शुरू की। वे कैम्प-4 से 400 मीटर के करीब तक चढ़ चुके थे। एवरेस्ट की चोटी भी लगभग इतनी ही दूरी पर थी। अचानक आनन्द की रफ्तार धीमी होने लगी। वो बार-बार बैठने लगा। लगा जैसे वो पासांग से कुछ कहना चाह रहा है।

आम तौर पर एवरेस्ट यात्रा का अन्तिम पड़ाव आने तक पर्वतारोही थककर चूर हो चुके होते हैं। इतनी ऊँचाई पर हर एक कदम बेहद थकाऊ हो जाता है। बड़ी मुश्किल घड़ी होती है यह। इसलिए पासांग को लगा कि आनन्द थक चुका है और थोड़ा आराम करने के बाद फिर से चढ़ाई शुरू करेगा।

पर असल में, थका हुआ होने के साथ-साथ आनन्द के ऑक्सीजन मास्क में कुछ गड़बड़ भी थी। इससे उसे साँस लेने में तकलीफ हो रही थी। थोड़ी ही देर में, आनन्द असहाय-सा लेट गया। तब पासांग को लगा कि कुछ गड़बड़ है। उसने आनन्द से बात करना चाही। उसे लगा कि वो कुछ अनाप-शनाप बड़बड़ा रहा है। उसे चक्कर-से आ रहे थे। ये ऑक्सीजन की कमी होने के संकेत थे।

पासांग ने खतरे का भाँप लगा लिया था। अगर उसने तुरन्त कुछ नहीं किया होता तो आनन्द का मरना तय था। बिना एक भी

पल गवाए उसने अपना ऑक्सीजन मास्क निकाला और आनन्द को लगा दिया। धीरे-धीरे आनन्द की खोई ऊर्जा वापस आने लगी। स्थिति थोड़ी काबू में होने के बाद शेरपा उसे निचले कैम्प में वापस ले आया।

दरअसल, इतनी ऊँचाई पर अपना मास्क किसी को देना अपनी जान को जोखिम में डालना है। वैसे, पहाड़ों में पैदा होने के कारण शेरपाओं के फेफड़ों की ताकत मैदानी इलाकों के लोगों से कहीं ज़्यादा होती है। शायद इसीलिए पासांग ने सोचा हो कि वो बिना ऑक्सीजन के सुरक्षित उतर सकता है। ऐसा हमेशा कर पाए इसकी कोई गारंटी नहीं है। बेहद खतरनाक हो सकने के बावजूद, पासांग ने अपनी जान जोखिम में डालते हुए आनन्द की जान बचाई।

पासांग की हिम्मत ही आनन्द को मौत के मुँह से खींच लाई। उस साल नहीं तो अगले साल वो एवरेस्ट की चढ़ाई कर लेता पर अगर पासांग ने सही समय पर सही निर्णय न लिया होता तो....

अब तो तुम समझ ही गए होगे कि क्यों हम शेरपाओं को पर्वतारोहियों की जीवनरेखा मानते हैं। किसी भी एवरेस्ट अभियान में सफल होने के लिए शेरपाओं का होना भी उतना ही ज़रूरी है जितना कि ऑक्सीजन का होना। आजकल कुछ अभियान बिना शेरपाओं के भी होने लगे हैं पर बेसकैम्प जहाँ से एवरेस्ट की चढ़ाई शुरू होती है वहाँ पहुँचकर आपको इनकी मदद लेनी ही होती है। इसीलिए इन चढ़ाइयों का असली श्रेय इन्हीं को जाता है। पर अफसोस कि इन्हें वो पहचान या स्थान नहीं मिलता जैसा पर्वतारोहियों को मिलता है।

पहाड़ों पर शेरपा हर कदम और हर पड़ाव पर मददगार साबित होते हैं। भारी सामान और किट को ले जाने से लेकर पहाड़ों पर एक गाइड की तरह रास्ते बताने तक, ये सभी काम बड़े ही समर्पण के साथ करते हैं। यात्रा के दौरान ये आपके लिए खाना बनाते हैं। खाना बनाने के लिए पानी भी लाते हैं। सभी योजनाएँ इनके साथ ही बनाई जाती हैं। ये मौसम का बहुत ही सटीक पूर्वानुमान भी लगाते हैं। इसके अलावा भी ये जाने कितने ही ज़रूरी काम करते हैं। पर इन सब से ज़्यादा ये आपके दोस्त होते हैं। पर्वतारोहण के दौरान एक अच्छा दोस्त होना बहुत ज़रूरी है। आपसी बातचीत में हम उन्हें "बडी" (यार) बुलाते हैं। एक अभियान केसफल होने के लिए ज़रूरी है कि सारी चीज़ें सही समय पर होती रहें। शारीरिक रूप से

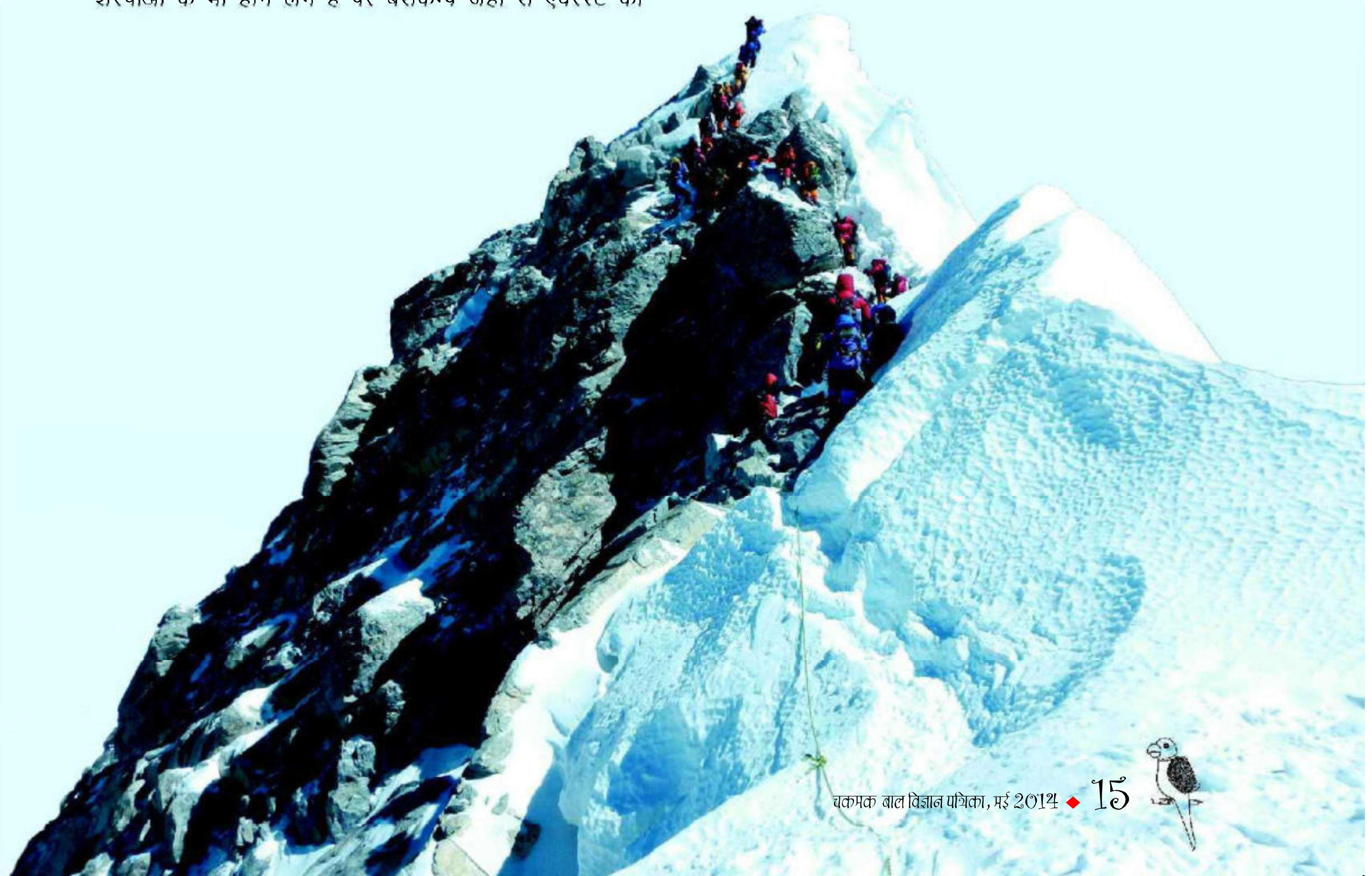

तन्दुरुस्त सदस्य, अच्छी सहनशक्ति, बढ़िया उपकरण/औज़ार खरीदने के लिए पैसे, टीमभावना, एक अच्छा लीडर, अनुकूल मौसम। और इन सब के अलावा एक अच्छा साथी होना बेहद ज़रूरी होता है।

बताता हूँ क्यों! इतनी ऊँचाई पर पहाड़ों पर चढ़ना खतरों और जोखिमों से भरा होता है। जैसे-जैसे समुद्र तल से ऊँचाई बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे हवा कम होती जाती है। इससे हम आसानी से बीमारी की चपेट में आ सकते हैं। पलमोनेरी ओडेमा का खतरा बहुत रहता है। इस रोग में फेफड़ों में पानी भर जाता है। और अगर पीड़ित को जल्द से जल्द नीचे लाकर इलाज न किया जाए तो यह घातक हो सकता है। एक मुश्किल यह है कि इस रोग के कोई लक्षण नहीं दिखते। इसलिए सभी को अपने साथियों के प्रति बहुत जागरूक होना ज़रूरी है। उनके हाव-भाव या आवाज़ में ज़रा भी अन्तर नज़र आए तो तुरन्त मेडिकल चेकअप कराना बेहद ज़रूरी है। बेशक अधिकांश मामलों में चढ़नेवाले का साथी शेरपा ही होता है। उसके पास ऐसी यात्राओं का अमूल्य और समृद्ध अनुभव होता है। वे पर्वतारोहियों का बड़ी ही ज़िम्मेदारी और सावधानी से खयाल रखते हैं। किसी भी प्रकार के बदलाव को वे तत्काल भाँप जाते हैं और बचाव कार्य शुरू कर देते हैं। हर अभियान में ऐसे बहुत से किस्से होते हैं।

मैं अपने अभियान का एक और अनुभव सुनाना चाहता हूँ। हमारे शेरपा दल का नेता सरदार कामी शेरपा काफी अनुभवी पर्वतारोही था। उन्होंने माउण्ट एवरेस्ट पर एक-दो नहीं बल्कि पूरे पन्द्रह बार फतह हासिल की थी। एवरेस्ट पर सबसे कम दिनों में चढ़ने का रिकॉर्ड उन्हीं के नाम दर्ज है। इसलिए हम उनकी बात को बहुत तवज्जो देते थे। टीम के किसी सदस्य द्वारा उनकी बात न माने पर उन्हें उसे डाँटने का पूरा अधिकार था। हमने खुम्बू नाम की बर्फीली घाटी से अपनी चढ़ाई शुरू की। यह बेहद

पहाड़ों पर शेरपा हर कदम और हर पड़ाव पर मददगार साबित होते हैं।

शेरपा तेनजिंग ने हम बहुतों का शेरपा शब्द से परिचय कराया है। वह दुनिया का पहला पर्वतारोही था जो एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ा था। 29 मई 1953 को वह एडमण्ड हिलेरी के साथ एवरेस्ट की सबसे ऊँची चोटी पर पहुँचा था। तेनजिंग शेरपा समुदाय से था। तिब्बती भाषा में शेरपा का मतलब होता है पूर्व में रहनेवाले लोग। इनके पूर्वज तिब्बत के खाम क्षेत्र में रहते थे। जो बाद में तिब्बत की घाटियों में चले गए थे। शेरपा आम तौर पर नेपाल के पूर्वी हिस्सों व पश्चिम बंगाल और सिक्किम के कुछ हिस्सों में रहते हैं। पहाड़ों के निचले हिस्सों से उसकी ऊँची चोटियों तक इनके गाँव बसे हैं। समुद्र तल से 400 से 450 मीटर तक की ऊँचाई के बेहद ठण्डे इलाकों में ये रहते मिल जाएँगे। इनकी भाषा शेरपा या शेरपाली है। ये तिब्बती, नेपाली, अँग्रेज़ी और हिन्दी भी जानते हैं। परम्परागत रूप से खेती ही इनका मुख्य पेशा है। खेती कम ऊँचाईवाले इलाकों में ही हो पाती है। वे वहाँ मक्का, गेहूँ, बाजरा और सब्ज़ियाँ उगाते हैं। खुम्बू जैसी जगहों पर वे याक पालते हैं। याक से ऊन, दूध, और दूध के अन्य उत्पाद जैसे मक्खन आदि मिल जाता है। नवम्बर से फरवरी तक हिमालय का पूरा क्षेत्र बर्फ से ढँका रहता है। ऐसे में खेती करना सम्भव नहीं होता। इसलिए इस समय ये पर्वतारोहण अभियान और ट्रेकिंग से जीवन चलाते हैं।

ज़्यादातर शेरपा बौद्ध धर्म को मानते हैं। इनकी अपनी पारम्पारिक वेशभूषा होती है। पुरुष और महिलाएँ दोनों एक लम्बी कमीज़ के ऊपर पैंटनुमा कपड़ा पहनते हैं। ये दोनों ही ऊन से बने होते हैं। इनके ऊपर ये एक मोटा कपड़ा लपेटे रहते हैं। जो घुटनों के नीचे तक रहता है और बाख्खू कहलाता है। औरतों के पहनावे में एक खास बात है उनका रंग-बिरंगा एप्रैन।

उन्होंने माउण्ट एवरेस्ट पर एक-दो नहीं बल्कि पूरे पन्द्रह बार फतह हासिल की थी। एवरेस्ट पर सबसे कम दिनों में चढ़ने का रिकॉर्ड उन्हीं के नाम दर्ज है। टीम के किसी सदस्य द्वारा उनकी बात न माने पर उन्हें उसे डाँटने का पूरा अधिकार था।

खतरनाक पड़ाव था। कामी शेरपा सभी से जल्दी-जल्दी चलने को कह रहा था पर कुछ लड़के थके होने के कारण पीछे छूटते जा रहे थे। वे धीरे-धीरे बढ़ना चाहते थे। पर शेरपा ने उनकी एक न सुनी। वो छड़ी लेकर उन्हें आगे बढ़ने को उकसाते रहे। लड़के इस बात से चिढ़-से गए थे और मुझसे शिकायत करने लगे। पर इसके तुरन्त बाद हमें पता चला कि हमारे खुम्बू से निकलते ही वहाँ

भयानक हिमस्खलन हुआ। शेरपा की बदौलत ही हम बाल-बाल बचे थे।

बहुत से लोग सोचते हैं कि यह तो शेरपाओं का काम ही है और उन्हें इसके लिए पैसे मिलते हैं। फिर क्यों हम उनका इतना आभार मानते हैं? पर अपना ऑक्सीजन मास्क पर्वतारोही को देकर अपनी जान जोखिम में डालना उनके काम का हिस्सा नहीं है। आनेवाले खतरे को भाँपकर लड़कों को तुरत-फुरत वहाँ से खदेड़ना भी उनका काम नहीं है। महज़ इंसानियत और साथी पर्वतारोहियों के प्रति प्रेम, सद्भावना ही उनसे ये काम करवाती है।

तुमने गौर किया होगा कि मैंने शेरपाओं को भी पर्वतारोही कहा है। मेरी राय में शेरपा भी हमारी ही तरह पर्वतारोही ही हैं। इतनी ऊँचाई पर पर्वतों पर रहते चले आने से उन्हें पर्वतारोही गुण उपहार में मिले हैं। इसीलिए शायद उन्होंने इसे अपना पेशा बनाया। तुमने सोचा है कि क्यों उन्होंने इतना खतरनाक पेशा चुना? शायद इसीलिए कि पहाड़ों का आकर्षण उनकी रगों में है। कई शेरपा अब चाहते हैं कि उनके बच्चे भी पढ़ाई कर दूसरे पेशों में जाएँ और सुरक्षित जीवन बिताएँ। इसलिए बहुत से बच्चे अब बाहर पढ़ने चले गए हैं। पर कुछ हिमालय के आकर्षण से वापस खिंचे चले आते हैं। मानो हिमालय उन्हें गर्मजोशी से बुला रहा हो। इसीलिए हिमालय में पर्वतारोहण चलता जा रहा है। बिना शेरपाओं के पर्वतारोहण के बारे में सोचना तक सम्भव नहीं।

जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे

रुस्तम

जो स्वप्न
मुझे नहीं आते थे
वे कहाँ जाते थे?

ज़रूर कोई और
उन्हें देखता था
अपनी नींद में।

रोज़ वह चुरा लेता था
मेरे कुछ स्वप्न!

वो कहावत सुनी है न – दिए तले अँधेरा! हमारे जीवन में भी कई बार ऐसा होता है। हमें लगता है कि फलाँ चीज़ के बारे में हमें सब पता है। पर तभी कुछ ऐसा घटता है कि उस चीज़ के बारे में हमारी सारी समझ धरी की धरी रह जाती है। कविता इस रूप में भी हमारे सामने कई बार आती है। वह रोशनी के एकदम पास के अँधेरे को सामने लाती है।

जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे, वे कहाँ जाते थे? यह कहना कितना ताज़ा है।

जब इंसान ने या किसी अन्य जीव ने पहला सपना देखा होगा यह सवाल तब पैदा हुआ होगा – जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे वे कहाँ जाते थे? पर वह आज इतने वर्षों बाद एक कवि ने पूछा। कविता ने उसे जगह दी।

सपना एक कल्पना ही तो है। आमतौर पर कल्पना किसी यथार्थ पर टिकी होती है। पर इस पंक्ति में एक कल्पना खुद एक दूसरी कल्पना पर टिकी है। सपने की कल्पना पर सपने के नहीं होने की कल्पना। किसी चीज़ को अपनी पहुँच से दूर बताने के लिए हम कहते हैं – यह तो हम सपने में भी नहीं सोच सकते। यहाँ कवि सपने के पार चला जाता है। यह सपने नहीं आने की बात नहीं है। यह सपनों के बाद की बात है। कुछ सपने सपने होने तक से रह गए।

आमतौर पर कल्पना घटकर यथार्थ में बदल जाती है। घटने के दोनों अर्थों में। कवि ने सपने देख लिए हैं। इसलिए वे अब यथार्थ हो गए हैं। पर कवि ने यहाँ बीत चुके समय को भी कल्पना में तब्दील कर दिया है। जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे वो कहाँ जाते थे? कवि जैसे सिफारिश करता है कि कोई भी घटना पूरी तरह नहीं घटती। वह हमेशा घट रही होती है। जिस क्षण कुछ घटता है उसी क्षण उसका कुछ अनघटा जीवित हो जाता है। जैसे कुछ सपनों के आने से कुछ सपनों का नहीं आना पैदा हुआ।

कवि के मन में कोई सपना है। जो उसे नहीं आया है। यह बात सपने देखने के बाद पता चली। बाद में उसने गौर किया कि कोई है जो उसके सपने चुरा रहा है। हम बरतनेवाली चीज़ों को चोरी से बचाने की फिक्र करते हैं। यहाँ कवि सपने के चोरी हो जाने की ही फिक्र नहीं करता बल्कि वह उस चोरी की बात कर रहा है जो सपने होने से भी पहले ही हो गई है।

हमारी दुनिया बेहद जुड़ी हुई है। सिर्फ इंसान नहीं। एक-एक जीव। कोई एक अपना दायरा बढ़ाता है तो किसी न किसी के हक पर आँच आती है। कोई हक से ज़्यादा लेता है तो किसी का हक छिन जाता है। अपने आसपास की दुनिया ऐसी छीना-झपटी से भरी हुई है। किसी के पास हज़ारों एकड़ ज़मीन है किसी के पास खड़े होने तक की ज़मीन नहीं। कोई दो वक्त की रोटी से महरूम है। एक आरामदायक जीवन तो उसके सपने में भी नहीं आता। क्या कवि किसी ऐसे ही सपने की बात कर रहा है? जो उससे छिन गया है। और किसी और के हक में चला गया है। कवि किसी ऐसी दुनिया का सपना देखना चाहता है जहाँ किसी के सपने ही न चुरा लिए जाएँ। शायद कवि इस दुनिया पर भी सवाल उठा रहा है जो पृथ्वी के तमाम जीवों के सपने चुराकर खड़ी की गई है। असमानता से भरी।

– चकमक

जो स्वप्न मुझे नहीं आते थे - कवि का बयान

ऐसा नहीं कि हम कविताएँ उन्हीं चीज़ों के बारे में लिखते हैं जिन्हें दैनिक जीवन में हम देखते हैं, अनुभव करते हैं या जो सहज तौर पर हमारे साथ घटती हैं। कई बार हम विशुद्ध कल्पना के माध्यम से भी कविताएँ लिख डालते हैं। या फिर कई बार हम अपनी कविताओं में, अन्य चीज़ों के साथ कुछ ऐसी चीज़ों को भी ले आते हैं जो सिर्फ काल्पनिक होती हैं, उनका हमारे वास्तविक जीवन से कुछ खास लेना-देना नहीं होता।

यह कहना कठिन है कि हम ऐसा क्यों करते हैं। बस यही कहना चाहिए कि बतौर कवि हम इस प्रक्रिया को रोक नहीं पाते।

मुझे लगता है कि प्रस्तुत कविता ऐसी ही एक कविता है और यह इसी प्रकार लिखी गई।

शाम को दफ्तर से लौटने के बाद सीढ़ियों पर बैठा चाय पीता हुआ मैं यूँ ही कुछ सोच रहा था जब इस कविता का पहला वाक्य मेरे मन में आयाः

जो स्वप्न
मुझे नहीं आते थे
वे कहाँ जाते थे?

हम एकदम देख सकते हैं कि जिन सपनों की बात इस वाक्य में की जा रही है वे ऐसे स्वप्न हैं जो विशुद्ध तौर पर काल्पनिक हैं। यह स्पष्ट है कि जिन सपनों को हम नहीं देखते, जो हमारी नींद में घटित नहीं होते, वे होते ही नहीं, वे हुए ही नहीं होते; उनका कोई अस्तित्व रहा ही नहीं होता। और यदि ऐसा है तो वे और कहीं जा ही नहीं सकते। परन्तु यह कविता इन्हीं सपनों की बात करती है और यह प्रश्न भी उठाती है कि शायद वे कहीं और चले जाते हैं। यही नहीं, आगे चलकर कविता यहाँ तक कहती है कि इन सपनों को खुद कवि या कविता का नायक नहीं, बल्कि कोई अन्य व्यक्ति देखता है जो इन्हें कवि या नायक से चुरा कर ले जाता है।

ज़ाहिर है कि यह सब कवि की कल्पना है और यह कल्पना शायद सायास भी नहीं है। अर्थात हम यह भी नहीं कह सकते कि कवि ने, यानी मैंने, कोशिश करके इन सपनों की कल्पना की थी; जिस कोशिश के फलस्वरूप यह कविता लिखी गई।

जिसका अर्थ शायद यही लेना चाहिए कि कवि की कल्पना हमेशा उसके वश में नहीं होती, उसके इशारे पर नहीं चलती। वह अपने तौर पर भी खुलने, फैलने लगती है और उड़ान लेने लगती है। और यह प्रक्रिया महत्वपूर्ण है, इसे अनदेखा नहीं किया जा सकता।

अन्त में, यह कहना चाहिए कि ऊपर जो कुछ भी मैंने प्रस्तुत कविता के बारे में लिखा है, उसका इस बात से कोई सम्बन्ध नहीं है कि कोई पाठक इसे किस रूप में पढ़ेगा या ग्रहण करेगा, या कोई व्याख्याकार इसकी क्या व्याख्या करेगा। मैं तो सिर्फ इस कविता का उदाहरण लेकर इस प्रकार की कविताओं के बारे में कुछ कहने की कोशिश कर रहा था।

– रुस्तम

चित्रः मुस्तफा अहमद, आठवीं, भोपाल

काली चिड़िया, सूअर और बचपन – मराठी फिल्म ‘फैन्ड्री’

वरुण ग्रोवर

जाब्या को एक काली चिड़िया की तलाश है। चमकीली, काली, छोटी-सी यह चिड़िया हमारे साँवले, छोटे-से जाब्या को गोरा कर देगी। जाब्या को यह चिड़िया ढूँढनी है, उसको मारना है, जलाना है और उसकी राख अपने चेहरे पर रगड़नी है। जब जाब्या गोरा हो जाएगा तो शालू उसे पसन्द करने लगेगी। जाब्या को लगता है कि अभी तो शालू उसे पसन्द नहीं करती। नहीं लगता नहीं है, ऐसा जाब्या को पता है। जाब्या ने देखा है कि कैसे एक लावारिस सूअर जब शालू की दोस्त को गलती से छू भर गया था तो शालू उस दोस्त को घर ले गई थी ताकि उसे नहलाकर शुद्ध किया जा सके। और जाब्या तो दिन भर सूअरों को पकड़ने का, मारने का ही काम करता है। कहीं किसी के घर के बाहर की नाली में सूअर फँस जाता है तो जाब्या को ही निकालने को कहा जाता है। जैसे सूअर का नाली में गिरना जाब्या की ही गलती है। गाँव की वर्ण-व्यवस्था में जाब्या और उसका दोस्त पिरया सबसे नीचे आते हैं। पूरी कक्षा में बाकी सब “सामान्य” बच्चे हैं, सिर्फ जाब्या और पिरया ही नीची जाति के हैं, दलित हैं। और इसीलिए जाब्या को काली चिड़िया की राख चाहिए। काली चिड़िया की राख जाब्या के माथे से सूअर का निशान मिटा देगी। ऐसा जाब्या को लगता है।

नागराज मंजुले की हाल ही में आई मराठी फिल्म “फैन्ड्री” (सूअर या सूअर का बाड़ा) जाब्या की कहानी है। आज के हिन्दुस्तान में, हिन्दुस्तान में भी बाबा साहेब अम्बेडकर के रास्ते दलित आन्दोलन के जन्म-स्थान रहे महाराष्ट्र के एक गाँव में रहनेवाले जाब्या की कहानी। फिल्म शहरी लोगों को परेशान करती है। कुछ कहते हैं ऐसा भेदभाव अब नहीं होता। कुछ कहते हैं कभी नहीं होता था और कुछ हैं जो यह तक कहते हैं कि इसमें गलत क्या है? तीनों सूरत में यह फिल्म परेशान ज़रूर करती है।

चाणक्य गाँव के एक कोने में साइकिल पंचर बनाने की दुकान चलाता है। दुकान में एक कैरम भी है जिसे खेलनेवालों का यहाँ अड्डा लगा रहता है। चाणक्य जाब्या को मुफ्त में खेलने देता है क्योंकि उसे जाब्या पसन्द है। जाब्या को शालू पसन्द है यह बात भी सिर्फ पिरया और चाणक्य को ही पता है। चाणक्य भी दलित है, लेकिन वो जाब्या की उमर का नहीं है। इसलिए लोग उस पर धौंस नहीं जमा सकते। पर चाणक्य बाकी गाँव से अलग-थलग रहता है। गाँववाले कहते हैं वो

इस सब में
बेचारी चिड़िया का क्या दोष?
सोचा जा सकता है कि इसमें सूअर की क्या गलती है?
और क्लास में सबसे आगे रहनेवाले
जाब्या की सच्चाई क्या है?

काला-जादू करता है और इसलिए शाम के बाद उससे बच के ही रहते हैं। जाब्या को काली चिड़िया के बारे में भी चाणक्य ने ही बताया है। ऐसा फिल्म में नहीं बताया गया है लेकिन मुझे लगता है कि चाणक्य खुद भी बचपन से उसी काली चिड़िया को ढूँढ रहा है।

फिल्म में जब भी जाब्या काली चिड़िया को मारने दौड़ता था, मेरा दिल चाहता था कि चिड़िया बच के निकल जाए। और ऐसा हुआ भी। जाब्या को हमेशा ही चिड़िया बहुत दूर दिखती और वो अन्त तक उसे नहीं मार पाया। तो क्या मैं नहीं चाहता था कि जाब्या इस जातिवाद की जेल से बाहर आए? लेकिन क्या सच में सिर्फ रंग बदलने से जाब्या को इज़्ज़त मिल जाएगी? क्या इतना ही आसान हुआ करता है कभी कोई संघर्ष? और इस सब में बेचारी चिड़िया का क्या दोष? लेकिन जाब्या उस जाति में पैदा हुआ जिसे सैकड़ों साल पहले कुछ ताकतवर लोगों ने "निचली जाति" मान लिया था, इसमें जाब्या का क्या दोष? बाबा साहेब अम्बेडकर ने हिन्दू वर्ण व्यवस्था को एक ऐसी बिना दरवाज़ोंवाली बहुमंज़िला मीनार कहा था जिसमें हर इंसान अलग-अलग मंज़िल पर जन्म लेता है। और क्योंकि किसी भी मंज़िल पर कोई दरवाज़ा नहीं है, इसलिए जो जहाँ जन्म लेता है उसे वहीं मरना पड़ता है। अपने पहले से तय किए गए वर्ण (या मंज़िल) पर।

यह फिल्म मैंने पिछले साल मुम्बई फिल्म फेस्टिवल में देखी थी। यहीं पर एक और डाक्यूमेंट्री फिल्म भी देखी – "सूर्य की छाया में"। यह अफ्रीका में तंज़ानिया की एक दुखद सामजिक स्थिति पर बनी है। तंज़ानिया में गरीबी और अशिक्षा के चलते यह मान्यता है कि एल्बिनो यानी सफेद दाग की बीमारी से ग्रसित लोगों को मारने से पुण्य और धन मिलता है। सफेद दाग से ग्रसित लोग वैसे ही सामाजिक रूप से शोषित होते हैं और ऊपर से इस गलत धारणा के चलते उनका जीना और मुश्किल हो गया है। यह फिल्म देखते हुए अचानक मुझे यह बात समझ में आई कि जो खुद दबाया हुआ और शोषित है, वो गरीबी से उबरने के लिए किसी

राष्ट्र-गान के दौरान सब देखते रहे और सूअर अपनी सुस्त चाल से चलता बना।

भी कहानी में विश्वास कर सकता है। फिर वो कहानी किसी सफेद दाग के रोगी को मारने की हो या किसी मिथकीय काली चिड़िया को। शोषण और दमन का चक्र ऐसे ही चलता रहता है। और इसीलिए मुझे लगा कि नागराज मंजुले ने बहुत सोच-समझकर उस चिड़िया को काला रखा। वो चिड़िया हमारे जाब्या के रंग की ही होनी थी। वो चिड़िया किसी और रूप में खुद जाब्या ही है।

लेकिन जैसा कि मैंने कहा – फिल्म में बहुत से मज़ेदार पल भी हैं। जाब्या के दिमाग में एक फिल्म जैसी चल रही है शालू को लेकर। इस फिल्म का हीरो जाब्या है। इसलिए जाब्या के सपनों में हिन्दी फिल्मों जैसे गाने आते हैं जिनमें वो खुले आसमान के नीचे, रंग-बिरंगे कपड़े पहने नाच रहा है। मेरे लिए फिल्म का सबसे मज़ेदार दृश्य फिल्म के सबसे दर्दनाक दृश्य के ठीक बीच में आता है। जाब्या की पूरी कोशिश है कि उसके स्कूल के बाकी बच्चे उसे कभी सूअर पकड़ते ना देख लें। लेकिन वो दिन उसकी ज़िन्दगी में आ ही जाता है। सूअरों की एक टोली ने गाँव को परेशान कर रक्खा है। जाब्या के पिता कचरू को आदेश मिलता है कि जल्द से जल्द सूअरों को पकड़ के उनका आतंक खत्म किया जाए। जाब्या की बदकिस्मती कि सूअर पकड़ने के लिए पूरा परिवार सुबह-सुबह स्कूल के टाइम पे ही निकल पड़ता है। बाकी बच्चे तैयार होकर स्कूल जा रहे हैं और जाब्या, अनमना, गुस्से और शर्म से भरा, अपने पिता, माँ और बहन के पीछे-पीछे चल रहा है। जाब्या का सबसे बुरा सपना सच होनेवाला है। सिर्फ शालू ही नहीं, बाकी का स्कूल भी आज देख लेगा कि पढ़ाई में तेज़ और क्लास में सबसे आगे रहनेवाले जाब्या की सच्चाई क्या है। फिल्म के इस दृश्य में मेरा दिल बैठ-सा रहा था।

एक तरफ स्कूल की सुबह की सभा चल रही है, दूसरी तरफ बगलवाले मैदान में जाब्या और उसका परिवार सूअर को पकड़ने के लिए घेरा बना रहा है। जाब्या रो भी रहा है, भागने की फिराक में भी है, पिता की मार भी खा रहा है, दूर से दोस्तों की नज़र से लज्जित भी हो रहा है। गाँव के कुछ बदतमीज़ लड़के, जो वहाँ मज़े लेने के लिए जमा हो गए हैं, उनके ताने भी सुन रहा है, और सूअर को पकड़ने की जुगत भी लगा रहा है। क्योंकि सूअर पकड़ा जाएगा, तभी तो जाब्या को इस नरक जैसे दिन से छुटकारा मिलेगा। (एक बार फिर, सोचा जा सकता है कि इसमें सूअर की क्या गलती कि सब उसे गन्दा जीव मानते हैं? है तो वो भी बाकी जानवरों की तरह ही चार पैरवाला!)

निर्देशक नागराज के साथ जाब्या

इस विचलित कर देनेवाले दृश्य के ठीक बीच में आया फिल्म का वह सीन जिस पर सबसे ज़्यादा तालियाँ बजीं। बहुत देर की भाग-दौड़ और चक्रव्यूह रचना के बाद आखिरकार ऐसा लगता है कि सूअर पकड़ में आ ही गया। उसे चारों तरफ से घेर लिया जाता है और अब बस जाब्या के पिता को आगे बढ़ना है और सूअर को दबोच लेना है। ठीक उसी वक्त स्कूल में राष्ट्र-गान शुरू हो जाता है। सब सावधान। जाब्या का मज़ाक उड़ानेवाले लफँगे भी, स्कूल से चोरी-छिपे इस परिवार को देख रही नज़रें भी, और जाब्या का पूरा परिवार भी। सब सावधान, सिवाय उस घिरे हुए सूअर के। 56 सेकण्ड के राष्ट्र-गान के दौरान सब देखते रहे और सूअर अपनी सुस्त चाल से चलता बना। जैसे कह रहा हो, होगा तुम्हारा देश, मेरा तो नहीं है।

आखिर में सूअर पकड़ा जाता है। तब तक पूरा स्कूल इकट्ठा हो चुका है। शालू ने अच्छी तरह से जाब्या को सूअर पकड़ते देख लिया है। आधा गाँव जाब्या की हँसी उड़ा रहा है। और रोता हुआ जाब्या चुपचाप अपने घर लौट रहा है। रास्ते में वही तमाशबीन लड़के जाब्या पर फिर से ताना कसते हैं। जाब्या गुस्से में दौड़ता हुआ एक बड़ा पत्थर उठाता है, और उस लड़के के माथे पर दे मारता है। यहाँ पर फिर से निर्देशक नागराज मंजुले ने एक चमत्कार किया है। वो पत्थर उड़ता हुआ आके सीधा सिनेमा के परदे पर लगता है और ज़ोर-से दर्द भरी चिल्लाने की एक आवाज़ आती है। स्क्रीन पर अँधेरा छा जाता है और फिल्म पूरी हो जाती है। एक तरह से जाब्या ने वो पत्थर हम सब पर मार दिया। मित्र मिहिर पांड्या ने फिल्म से निकलते हुए कहा – एक विद्रोह की शुरुआत के साथ यह फिल्म खत्म हो गई।

एक था हाजी एक था नाजी

धनुर्विद्या

(पेज 6 का शेष भाग)

राजकुमार ने तीर चलाया, लेकिन एक भी चिड़िया नहीं गिरी।

राजकुमार ने कहा, "ये तो बहुत ऊपर हैं!"

आचार्य बोले, "चलो छोड़ो, कल देखेंगे।"

अगले दिन पेड़ के सहारे ज़मीन पर एक पटिया रखा था और उस पर कई चिड़ियाँ बनी हुई थीं। आचार्य ने निशाना लगाना सिखाया और कहा, "इनमें से किसी को भी निशाना बना लो।" राजकुमार ने कोशिश की लेकिन एक भी चिड़िया को निशाना नहीं लगा पाया।

राजकुमार चिढ़कर बोला, "शायद आपको सिखाना ही नहीं आता।"

आचार्य ने कहा, "चलो छोड़ो। कल देखेंगे।"

अगले दिन वहाँ एक खाली पटिया रखा था।

आचार्य ने कहा, "इस पटिए पर दस तीर चलाओ।"

राजकुमार ने वैसा ही किया।

दस में से सात तीर पटिए पर लगे थे। तीन इधर-उधर निकल गए थे।

जहाँ-जहाँ पटिए पर तीर लगे थे वहाँ-वहाँ आचार्य ने चिड़ियाँ बना दीं और बोले, "अब तुम कह सकते हो कि तुमने दस में से सात निशाने सही लगाए।"

राजकुमार आचार्य का मुँह देखता रह गया।

उस दिन राजा भी आया हुआ था – यह देखने कि बेटे का प्रशिक्षण कैसा चल रहा है।

राजा ने गुस्से से आचार्य से पूछा, "आप इस तरह धनुर्विद्या सिखाते हैं?"

आचार्य ने मुस्कराते हुए कहा, "जिसके मन में सीखने की इच्छा नहीं होती उसे मैं ऐसे ही सिखाता हूँ।"

—आकांक्षा कर्वे, दूसरी,
आनन्द निकेतन स्कूल वर्धा, महाराष्ट्र

काश!!!

— रवीन्द्र थापा, पाँचवीं,
छिबाला, उत्तरकाशी

काश मेरे गाँव में भी स्कूल होता। हमेशा यही ख्याल मन में आता है। हमारे गाँव में स्कूल नहीं होने से मुझे और मेरे अन्य दोस्तों को भी मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। यह नहीं कि मैं स्कूल नहीं जाता हूँ। स्कूल जाना मुझे काफी अच्छा लगता है। इस समय मैं राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय में कक्षा आठवीं का छात्र हूँ। मेरा गाँव दुलमेरा स्टेशन है।

मैं अपने गाँव दुलमेरा से 8 किलोमीटर दूर स्कूल जाता हूँ। स्कूल दूर होने के कारण कई बार मुझे स्कूल पहुँचने में देर हो जाती है। देर होने पर गुरूजी हमें डाँटते हैं और कई बार तो बातें भी सुनाते हैं कि तुम्हारा स्कूल आना बेकार है। तुम्हें स्कूल नहीं आना चाहिए। मैं अपनी समस्या गुरूजी के सामने रखता हूँ लेकिन उसका कोई असर नहीं होता। स्कूल में देर से पहुँचने के साथ-साथ छुट्टी के बाद घर पहुँचने में भी देरी हो जाती है।

इसी बात को सोचते हुए मेरे मन में ख्याल आता है कि हमारे गाँव में भी बारहवीं तक स्कूल होता तो हमें गाँव से बाहर नहीं जाना पड़ता। हमने कई बार बाल मंच बैठक में इस समस्या पर चर्चा की है। साथ ही साथ गाँव में भी समुदाय से चर्चा कर बारहवीं तक स्कूल बनाए जाने की बात की है। अभी गाँव के लोगों ने भी हमारी बात पर गौर करते हुए मुद्दे को आगे रखने की बात की है। गाँव में हमारी तरह बहुत सारे बच्चे हैं जो गाँव से बाहर स्कूल जाते हैं। और कई बच्चे तो शिक्षा से वंचित भी हैं। यही कारण है कि बच्चे की उम्र ज़्यादा होने के बाद भी वह छोटी ही कक्षा में रहता है या फिर उसे पढ़ना-लिखना नहीं आता। मैं अपनी बात रख रहा हूँ ताकि हमारी समस्या सम्बन्धित लोगों तक पहुँचे और वह इसके लिए सोचना शुरू करें।

—नाम नहीं लिखा, आठवीं,
दुलमेरा, बाल मंच लूनकरणसर, राजस्थान

मेरा पन्ना

सपने

कुछ सपनों को जो पंख दिए,
वो खुले आसमान में उड़ने लगे,
बादलों की छाँव मिले,
तो कभी तारों की महफिल सजी।
नरम-नरम हवा के पालनों में पलने लगे,
कोरे-कोरे ये सपने, रंगों से खेलने लगे,
सुनहरी धूप के धागों से एक नया जहाँ बुनते हुए,
बिखरे-बिखरे यह सपने अपने-आप में ही सिमटने लगे।
चलते-चलते खो गए, अपनी ही धड़कन से दूर हो गए,
पीछे मुड़े तो दिखा कहानी बनके बिकता अपना ही चेहरा,
फिर भी रुका नहीं साँसों और धड़कनों का यह सुस्त कारवां
क्योंकि टिमटिमा रहा था अभी भी
एक सपना सितारा बन के।

—आदित्य रामैया, आठवीं,
डी.पी.एस कोयम्बत्तूर, तमिलनाडू

खुशी या गम

सर्दियों की वह शाम आज भी याद है मुझे। बाज़ार से लौटते समय एक नन्हा प्यारा कुत्ता दिखा था। वह ठिठुर रहा था। और शायद किसी की तलाश में भी था...। उसके गले की पट्टी देखकर मुझे लगा कि वह किसी का पालतू कुत्ता है। पर जब आसपास कोई न दिखा तो मैं उसे अपने घर ले आई। घर में सबने यह कहानी सुनी तो सबों को उससे सहानुभूति हुई। मैं बहुत खुश थी। परिवार के नए सदस्य को हमने दिल से अपना लिया। अगली सुबह मैं उसे बगल के पार्क में सैर के लिए ले गई। अचानक एक अधेड़ उम्र की महिला मेरे पास आईं और उस कुत्ते के बारे में पूछने लगीं। मुझे यह समझते देर न लगी कि वह इसकी असली मालकिन हैं। और यह भी कि मेरी छोटी-सी खुशी का अन्त हो चुका है। खैर... मैंने चुपचाप अपने नए दोस्त को उनके हवाले कर दिया। वे मुझे धन्यवाद दे रही थीं और मैं यह सोच रही थी कि मैं किसी की खोई हुई चीज़ उसे लौटाकर खुश हूँ या अपना कुछ खोकर उदास...!!

—शताक्षी श्रेया, पाँचवीं,
ए.पी.एस पटना, बिहार

—अली, पहली, थ्री टू वन स्कूल, मुम्बई, महाराष्ट्र

— रेशमा, पहली, रामदौरी, स्वतंत्र तालीम संस्था, सीतापुर, उ. प्र.

मेरा पन्ना

गुगली

राजेन्द्र धोड़पकर

—रुपाली, मुस्कान संस्था, भोपाल, म. प्र.

रोने-चिल्लानेवाला राजा

एक बार की बात है कि एक जंगल था। उस जंगल में एक राजा और रानी रहते थे। एक दिन की बात है कि रानी का भाई आया। राजा ने उससे पूछा, "क्या समस्या है?" रानी के भाई ने कहा, "सब ठीक है।" और अपनी बहन से पूछा, "बहन तुम मेरे साथ चलोगी क्या?" बहन बोली कि भाई चले चलूँगी। फिर वह बोली कि भाई अभी तो शाम हो गई है। कल चलेंगे, अभी तो नहीं चलेंगे।

फिर सुबह दोनों बहन-भाई चल दिए। राजा अकेला रह गया। शाम को राजा ने खाना बनाया। खाना बनाने के लिए चूल्हा जलाया। धुएँ से उसकी आँखों में आँसू आ गए। एक रोटी को सेकता और एक उँगली जला लेता। उँगली जलने पर बावड़ों की तरह चिल्लाता। रोटी बनाता जाता, उँगली जलाता जाता और चिल्लाता जाता। धुएँ से आँखों में आँसू भर जाते वो अलग।
रानी के चले जाने के बाद राजा खूब रोया, खूब चिल्लाया। रानी तो अपने भाई के साथ चली गई थी। उसे तो पता ही नहीं था कि राजा भी रोता-चिल्लाता है।

—आरती मीना, 11 वर्ष, सवाई माधोपुर, राजस्थान

कितने सारे रंग

पेड़ आया
कितने सारे रंग लाया
कितने अच्छे रंग खिल रहे हैं
फूल कितने सुन्दर लग रहे हैं
नदी बहती चली आ रही है दूर से
कितनी सुन्दर बह रही है नदी
देख रहे हैं कितने सारे आदमी

—रामघणी, 12 वर्ष, जगनपुरा, सवाई माधोपुर, राजस्थान

फेसबुक से

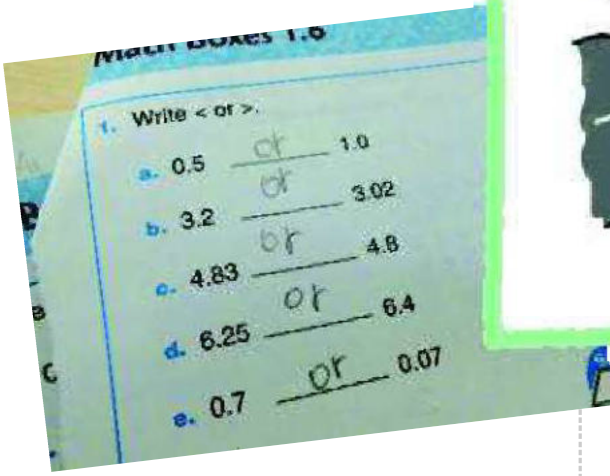
Math Boxes 1.6

1. Write < or >.

a. 0.5 ___or___ 1.0

b. 3.2 ___or___ 3.02

c. 4.83 ___or___ 4.8

d. 6.25 ___or___ 6.4

e. 0.7 ___or___ 0.07

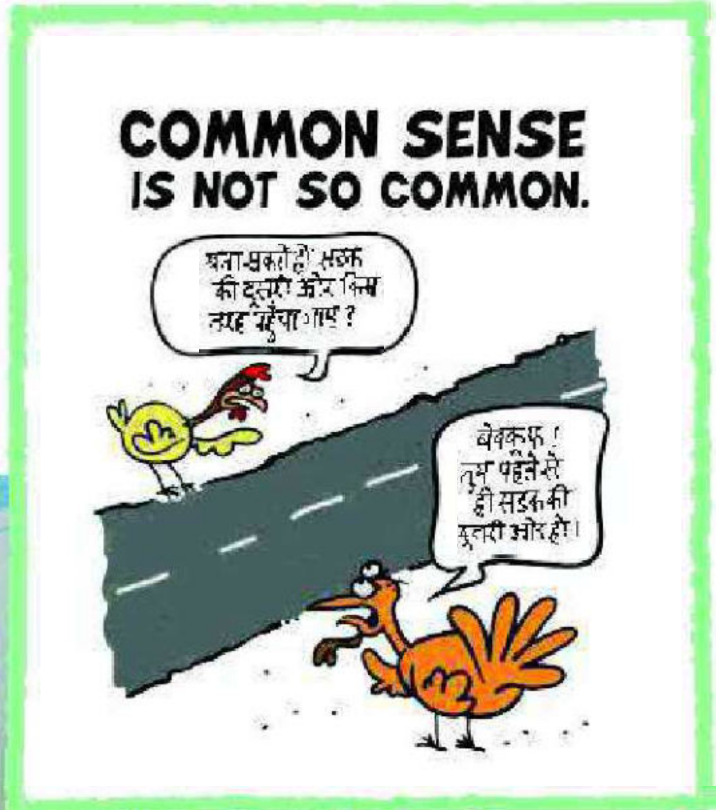

सेंटीमीटर को मीटर में किस तरह बदलोगे ?

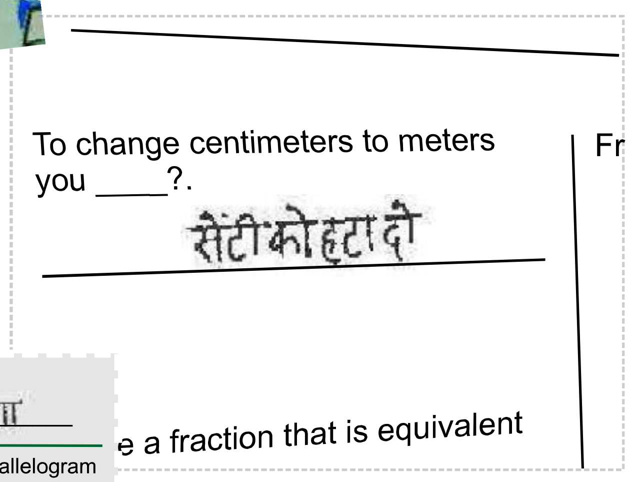
To change centimeters to meters you ____?.

सेंटी को हटा दो

Fr

e a fraction that is equivalent

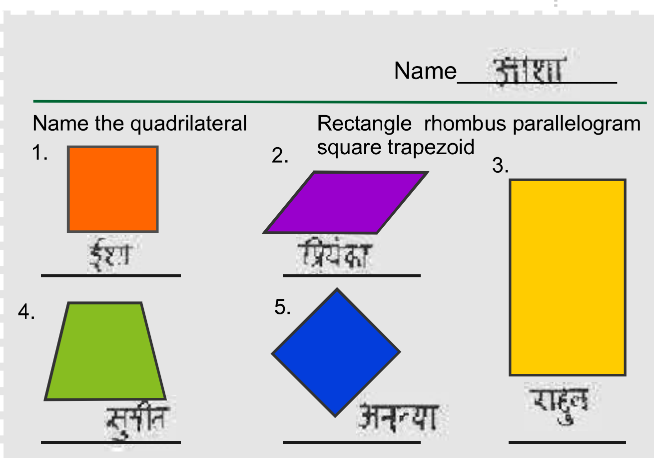
Name ___आशा___

Name the quadrilateral

Rectangle rhombus parallelogram square trapezoid

1. ईशा

2. प्रियंका

3. राहुल

4. सुमीत

5. अनन्या

इन चतुर्भुजों के नाम लिखो

चित्रः सुनीता

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की लघुकथाएँ

दो घड़े

एक घड़ा मिट्टी का बना था, दूसरा पीतल का। दोनों नदी किनारे रखे थे। इसी समय बाढ़ आ गई। बहाव में दोनों घड़े बहते चले। बहुत समय मिट्टी के घड़े ने खुद को पीतलवाले से काफी फासले पर रखना चाहा।

पीतलवाले घड़े ने कहा, "तुम डरो नहीं दोस्त, मैं तुम्हें धक्के न लगाऊँगा।"

मिट्टीवाले ने जवाब दिया, "तुम जान-बूझकर मुझे धक्का न लगाओगे, सही है; मगर बहाव की वजह से हम दोनों ज़रूर टकराएँगे। अगर ऐसा हुआ तो तुम्हारे बचाने पर भी मैं तुम्हारे धक्कों से न बच सकूँगा और मेरे टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे। इसलिए अच्छा है कि हम दोनों अलग-अलग रहें।"

गधा और मेंढक

एक गधा लकड़ी का भारी बोझ लिए जा रहा था। वह एक दलदल में गिर गया। वहाँ मेंढकों के बीच जा लगा। रेंकता और चिल्लाता हुआ वह इस तरह साँसें भरने लगा जैसे दूसरे ही क्षण मर जाएगा।

आखिर एक मेंढक ने कहा, "दोस्तों, जब से तुम इस दलदल में गिरे, ऐसा ढोंग क्यों रच रहे हो? मैं हैरत में हूँ, जब से हम यहाँ हैं अगर तब से तुम होते तो न जाने क्या करते?"

खच्चर और छाँह

एक दूर देहात की बात है। गरमियों के दिन थे। एक आदमी ने खच्चर किराए पर लिया। उसे एक शहर में कुछ माल लाद ले जाना था। शिद्दत की गरमी थी। धूप इतनी तेज़ थी कि उस आदमी को आराम करने के लिए रास्ते के किनारे उतरना पड़ा। खच्चर की छाँह में वह आराम करने लगा। वहाँ कोई दूसरी छाँह न थी।

खच्चर का किराएदार इस तरह आराम कर रहा था, पर उसके मालिक से वह तेज़ धूप खड़े-खड़े बरदाश्त न की गई। उसने झटककर कहा, "चलो, खच्चर शहर तक के लिए किराए पर लिया गया है, न कि बीच में पेड़ की छाँह बनाने के लिए।"

किराएदार ने कहा, "जब तक शहर का रास्ता पूरा नहीं होता, खच्चर मेरा है, तुम किराया ले चुके हो।"

"जरूर," खच्चर के मालिक ने कहा, "तुमने खच्चर को किराए पर लिया है न कि छाँह को।"

किसान, उसका हल और गधा

एक देहाती किसान था। दिनभर वह अपने बैलों से खेत जोतता रहा। शाम तक तीनों थक गए। बैलों को सानी-पानी के लिए उसने घर भेज दिया, और थका हुआ अपने गधे पर हल और माची लादकर चढ़ा।

पीठ पर इतने बोझ के चढ़ने पर कमज़ोर गधा वहाँ से एक कदम भी न हिला, बल्कि वहीं ज़मीन में गड़-सा जाने लगा। किसान को यह देखकर दया आई। उसने गधे की पीठ पर बैठे हुए ही, हल को उठाकर अपने कन्धे पर रख दिया और चुमकारकर गधे से कहा, "चलो, चलो मेरे समझदार बच्चे, मुझे तो तुम बड़े मज़े में ले चल सकते हो? तुम्हारा बोझ हलका करने के लिए हल को मैंने अपने कन्धे पर रख लिया है।"

अनोखा चित्रकार

प्रस्तुतिः अरविन्द गुप्ता

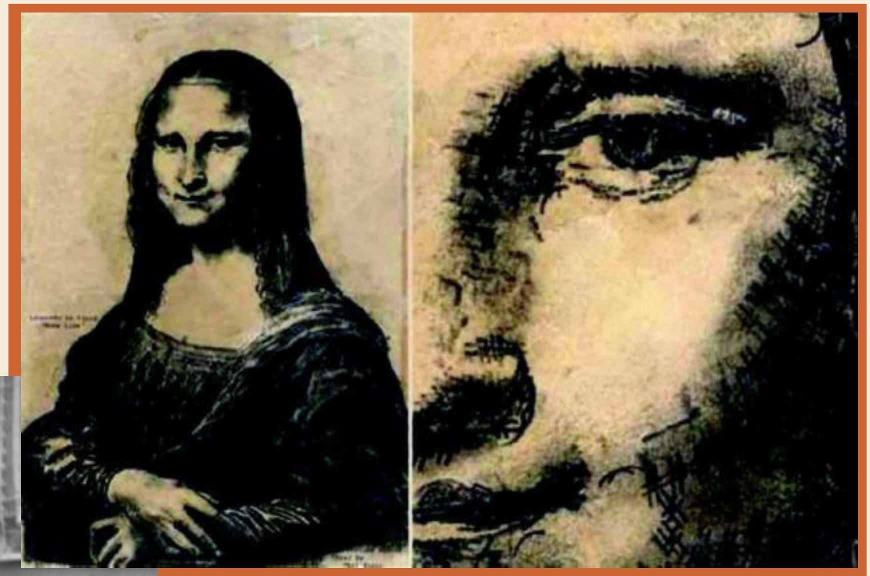

पॉल स्मिथ का जन्म 1921 में फिलाडेल्फिया में हुआ था। अभी वे बहुत छोटे ही थे कि पता चला कि वे दिमागी लकवे से पीड़ित हैं। इस बीमारी के कारण वे खाना खाने, नहाने, कपड़े पहनने जैसे आसान समझे जाने वाले काम भी नहीं कर पाते थे। दूसरे बच्चों की तरह स्कूल जाना, खुद को व्यक्त कर पाना तो दूर की बात थी। पर बावजूद इसके उन्होंने ज़बरदस्त जीवन जिया। अपनी असाधारण इच्छाशक्ति के बूते उन्होंने एक अनूठी कला रच डाली।

15 साल के होते-होते पॉल टाइपराइटर से चित्र बनाने लगे थे। और वे इसमें लगातार सुधार लाते गए। और एक दिन उन्होंने एक अद्‌भुत मास्टरपीस बना ही डाला। चित्र बनाने का उनका अपना ही तरीका था। वे अपने बाएँ हाथ से दाएँ हाथ को स्थिर बनाए रहते। दोनों हाथों से टाइप नहीं कर पाने की वजह से वे शिफ्ट वाली की को लॉक कर देते। और "@ # $ % ^ & * ( ) _" जैसे संकेतों से अपने चित्र बनाते। वे अकसर शास्त्रीय संगीत सुनते हुए चित्र बनाते। दिन में दो से तीन घण्टे वे इस तरह अपने टाइपराइटर के साथ गुज़ारते। एक चित्र बनाने में उन्हें दो हफ्तों से तीन महीने तक का समय लग जाता। लगभग सत्तर साल तक वे चित्र बनाते रहे। इस दौरान उन्होंने सौ से भी ज़्यादा चित्र बनाए। अपने ज़्यादातर चित्रों को वे यूँ ही लोगों को दे दिया करते थे।

दिमागी लकवे के कारण पॉल को चलना सीखने में लगभग 32 साल लगे और लगभग 16 साल में वे बोलना सीख पाए। इसे देखते हुए हम उनकी इच्छाशक्ति के कायल हुए बगैर नहीं रह पाते हैं जिससे वे इतने कम समय में इतनी सुन्दर कलाकारी करने लगे। टाइपराइटर के कुछेक संकेतों का तो वो ऐसा इस्तेमाल करते कि लगता उनके चित्रों में चारकोल या पेंसिल से शेडिंग की गई है।

उम्र के साथ उनकी आँख का मोतियाबिन्द इतना बढ़ गया कि 2004 में उन्होंने चित्र बनाना एकदम बन्द कर दिया। 2007 में उन्होंने इस दुनिया से रुखसत ली। अपने पीछे वे इस अद्‌भुत कला का नायब तोहफा छोड़ गए। और इससे भी ज़रूरी यह सन्देश कि अगर किसी चीज़ में पूरे मन से रम जाओ तो कुछ भी नामुमकिन नहीं....

माथा पच्ची

1 क्या तुम चार 9 (9,9,9,9) और एक 1 को केवल एक गणितीय चिन्ह के साथ इस्तेमाल कर 100 उत्तर ला सकते हो?

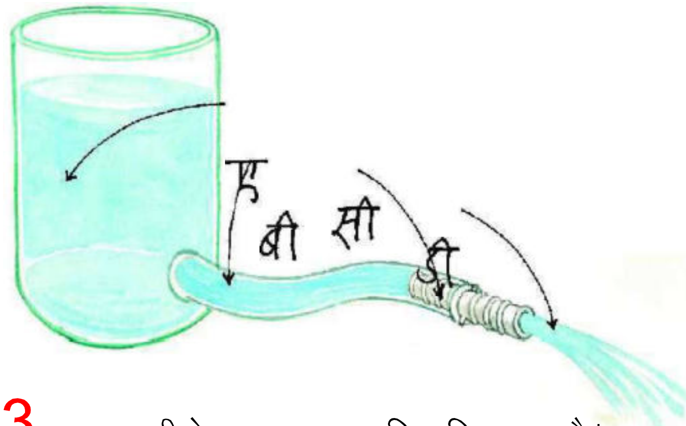

2 नीचे एक चौकोर कागज़ का चित्र दिया गया है। कागज़ में बना गोला छेद को दर्शाता है। इस कागज़ को सिर्फ एक कट के ज़रिए दो भागों में इस तरह बाँटो कि काटने के बाद यदि दोनों टुकड़ों को जोड़ें तो गोला कागज़ के बीचों-बीच आ जाए।

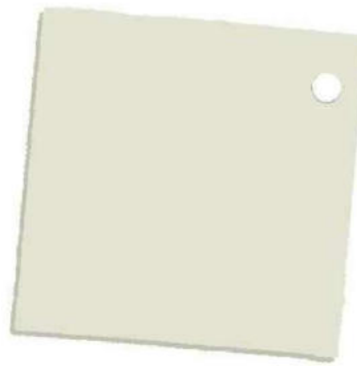

3 ऊपर पानी के पाइप का एक चित्र दिया गया है। क्या तुम बता सकते हो कि चित्र में दिखाए गए किस बिन्दु पर पानी का बहाव सबसे तेज़ होगा और क्यों?

4 तुमने देखा होगा कि ठहरे हुए पानी में पत्थर फेंकने से उसमें गोलाकार लहरें पैदा होती हैं जो बाहर की ओर फैलती जाती हैं। यदि तुम नदी के बहते पानी में पत्थर फेंको तो तुम्हारे हिसाब से लहरों का आकार कैसा होगा और क्यों?

7 सारा, ज़ेन और जसमीत तीनों को बराबर-बराबर टॉफियाँ मिलीं। तीनों ने अपने-अपने हिस्से से 6 टॉफियाँ खा लीं। अब तीनों के पास कुल मिलाकर उतनी टॉफियाँ हैं जितनी बाँटने के बाद हरेक के पास थीं। तुम्हें बताना है कि कुल कितनी टॉफियाँ बाँटी गईं।

5 यदि एक दिन के लिए हमें दिखना बन्द हो जाए तो वो कौन-से काम होंगे जिन्हें करना सबसे ज़्यादा मुश्किल होगा?

6 कोई व्यक्ति ज़्यादा से ज़्यादा कितनी तेज़ दौड़ सकता है?

चित्रः दिलीप चिंचालकर

वो नन्हा धनेष

अजय गाडिकर

माँ-पिता और घोंसले से दूर नन्हा धनेष
गीले शरीर पर चिपकी मिट्‌टी
बहुत ज़्यादा थका हारा
बिल्लियों और शिकारी पक्षियों का डर

सभी फोटोः अजय गाडिकर

उस वक्त मैं इन्दौर के नवरत्न बाग नर्सरी में धनेष (इंडियन ग्रे हॉर्नबिल) के घोंसले बनाने से लेकर बच्चों के बाहर निकलने तक के सफर पर एक फिल्म बना रहा था। मुझे पूरे धनेष परिवार के बहुत ही सुन्दर शॉट मिले थे। और मैं बहुत खुश था। बच्चों के घोंसले से बाहर निकलते ही मैंने अपना बोरिया-बिस्तर उठाया और चल दिया। मेरा काम तो अब हो ही चुका था।

पर दूसरे ही दिन मुझे एक फॉरेस्ट गार्ड का फोन आया कि उसे धनेष का एक बच्चा सड़क पर गिरा मिला है। मैं तुरन्त वहाँ पहुँचा। बच्चा बड़ी ही बुरी स्थिति में था। उसके पूरे गीले शरीर पर मिट्‌टी चिपकी हुई थी। उड़ता कैसे वो भला? मैं भी सोच में पड़ गया कि करूँ क्या! उस के माँ-पिता पास ही से चीख-चीखकर उसे उड़ने के लिए उकसा रहे थे।

इत्तेफाक से इन्दौर वन विभाग के एक आला अफसर उस दिन वहाँ एक मीटिंग के लिए आए हुए थे। बात उन तक पहुँची तो वे भी आ गए। सारी स्थिति का जायज़ा लेने के बाद उनकी सलाह थी कि उसे बिल्ली, कुत्तों से बचाने के लिए किसी पिंजरे में रख दिया जाए। वैसा ही किया गया। उसके खाने के लिए कुछ फल और पानी भी वहाँ रख छोड़ा था। लेकिन उसने कुछ नहीं खाया।

तय यह हुआ कि रात भर बच्चे को वहीं रहने दिया जाए। और सुबह जब उसके माँ-बाप आसपास हों तो उसे छोड़ा जा सकता है। हमारी अब तक की जानकारी में हमने धनेष के बच्चे को पिंजरे में पलते-बढ़ते नहीं सुना था।

अगले दिन मैं एकदम सुबह-सुबह नर्सरी में पहुँच गया। हमने पिंजरा खोला। पर वो दो-तीन मीटर से ज़्यादा उड़ नहीं पा रहा था। उसके माँ-बाप ऊपर से चीख-चीखकर उसका हौंसला बढ़ा रहे थे। पर वो लम्बी उड़ान भरने के हिसाब से बहुत कमज़ोर था। पेड़ पर बैठे अपने माँ-बाप तक पहुँचने की कोशिश में वो बार-बार ज़मीन पर गिर रहा था। इस पूरी कवायद में वो बहुत ज़्यादा थक गया था। ऐसे में हमने उसे फिर से पिंजरे में ही रखने का विचार बनाया। उसे बचाने के लिए अब कुछ और सोचा जाना था।

अचानक मुझे पक्षी प्रेमी पी एम लाड का खयाल आया। किस्मत ही थी कि उस समय वे इन्दौर में ही थे। खबर लगते ही वे तुरन्त आ पहुँचे। और सब कुछ देखकर बोले कि बच्चे को तभी बचाया जा सकता है अगर उसके माँ-बाप उसे स्वीकार लें और उसे खाना

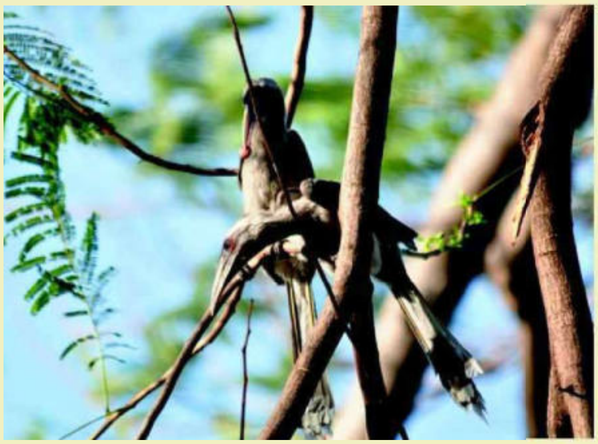

खिलाएँ। उन्होंने कहा कि हम क्या जाने कि उसे क्या खिलाना है और कैसे खिलाना है! इसलिए हमारी कोशिश यही होनी चाहिए कि किसी तरह से उसे पेड़ पर उसके घोंसले के पास बैठा दिया जाए।

बिना देर किए गुलमोहर के पेड़ से एक सीढ़ी बाँधी गई। और हमारे एक साथी ने बच्चे को उसके घोंसले के पास एक शाख पर बैठा दिया। बच्चा आराम से उस पर बैठा रहा। उसके माँ-बाप ने भी जैसे बच्चे को बचाने की ज़रूरत को तत्काल भाँप लिया था। वे उसे खिलाने में जुट गए। पूरा दिन लगातार उसको खिलाना जारी रहा। हम सब ने बड़ी राहत की साँस ली। बच्चा वहीं शाख पर बैठा रहा।

रात में बिल्लियों और शिकारी पक्षियों के डर से हमने उसे घोंसले में रख दिया। अगले दिन भी माँ-बाप उसकी आवभगत पूरा दिन करते रहे। अब वो अपनी चोंच से अपने पंखों की सफाई करने लगा था। गीली मिट्टी से उसके पंख चिपचिपा रहे थे। दो दिनों में ही वो काफी स्वस्थ लगने लगा था।

तीसरे दिन हमने रात भर उसे पेड़ पर ही रहने देने का जोखिम उठाया। हम घबराए हुए तो थे, पर ऐसा करना ज़रूरी भी लग रहा था। सुबह जब वो उसी शाख पर बैठा दिखा तो हमारे मन खुशी से भर गए।

इसके बाद तो अपने माँ-पिता के साथ वो कभी इस डाल पर दिखता तो कभी उस पर। कभी लम्बी उड़ान भरते भी नज़र आ जाता। हाँ, इस दौरान उसकी खिलाई-पिलाई का उसके माँ-बाप पूरा खयाल रख रहे थे।

नन्हा धनेष लम्बी परवाज़ के लिए तैयार हो रहा था।

चील

सीमा आज़ाद

जंगल के जानवरों को दिन बहुत अच्छा लगता था क्योंकि दिन भर वे खाते-पीते और खेलते रहते थे। रात होते ही उन्हें सोना पड़ता था। क्योंकि कुछ दिखाई ही नहीं देता था। एक दिन सारे जानवरों ने मिलकर सोचा कि अगर हमेशा दिन रहे तो कितना मज़ा रहे? पर इसके लिए वे क्या करें यह विचार का विषय था। किसी ने सुझाया कि अगर सूरज को पकड़कर हम लोग यहीं रख लें तो हर समय दिन रहेगा।

यह विचार सबको जँच गया।

पर सवाल था कि सूरज को पकड़ेगा कौन?

पहले हाथी तैयार हुआ उसने सूँड उठाकर चारों ओर घुमाई। पर वह तो बादल तक भी नहीं पहुँची। इसके बाद बन्दर ने सूरज को पकड़ लाने की ठानी। वह एक डाल से दूसरी डाल पर कूदता रहा। ऊँची-ऊँची कूद लगाता रहा पर सूरज तक नहीं पहुँचा। अब चिड़ियों ने हिम्मत की और सब खूब सारा दाना चुगने के बाद उड़ीं। पर थक कर वापस आ गईं। सूरज तो बादल के भी ऊपर था। अबकी चीलों ने सूरज को लेकर ही आने का वादा किया। वे उड़ीं। ऊपर और ऊपर उड़ती ही चली गईं। सूरज को खोजती। सारे जानवर आज तक ज़मीन पर चीलों का इन्तजार कर रहे हैं। कि वे एक दिन सूरज को लेकर कब वापस आएँगी। और तब हर समय दिन रहा करेगा।

चित्रः संजू जैन

पीछे छूटा हुआ भाई

रिनचिन

कॉलेज से घर पहुँचते ही प्रीति सीधे रसोई में गई। तीनेक गिलास पानी गटकने के बाद बाहर आई और बोली, "भैया कहाँ हैं?"

"चाचा उसे साथ ले गए हैं, वकील के पास। रात तक आ जाएगा।"

"वोइ मैं सोचूँ कि आज रिमोट तुम्हारे हाथ में कैसे आ गया!"

"जा हाथ-मुँह धो कर पहले खाना खा ले। केवल पानी से तो तेरा पेट भरेगा नहीं!" टीवी से नज़र हटाकर माँ ने उसे देखते हुए कहा।

"तुम्हें कैसे पता मैं पानी पी रही थी?"

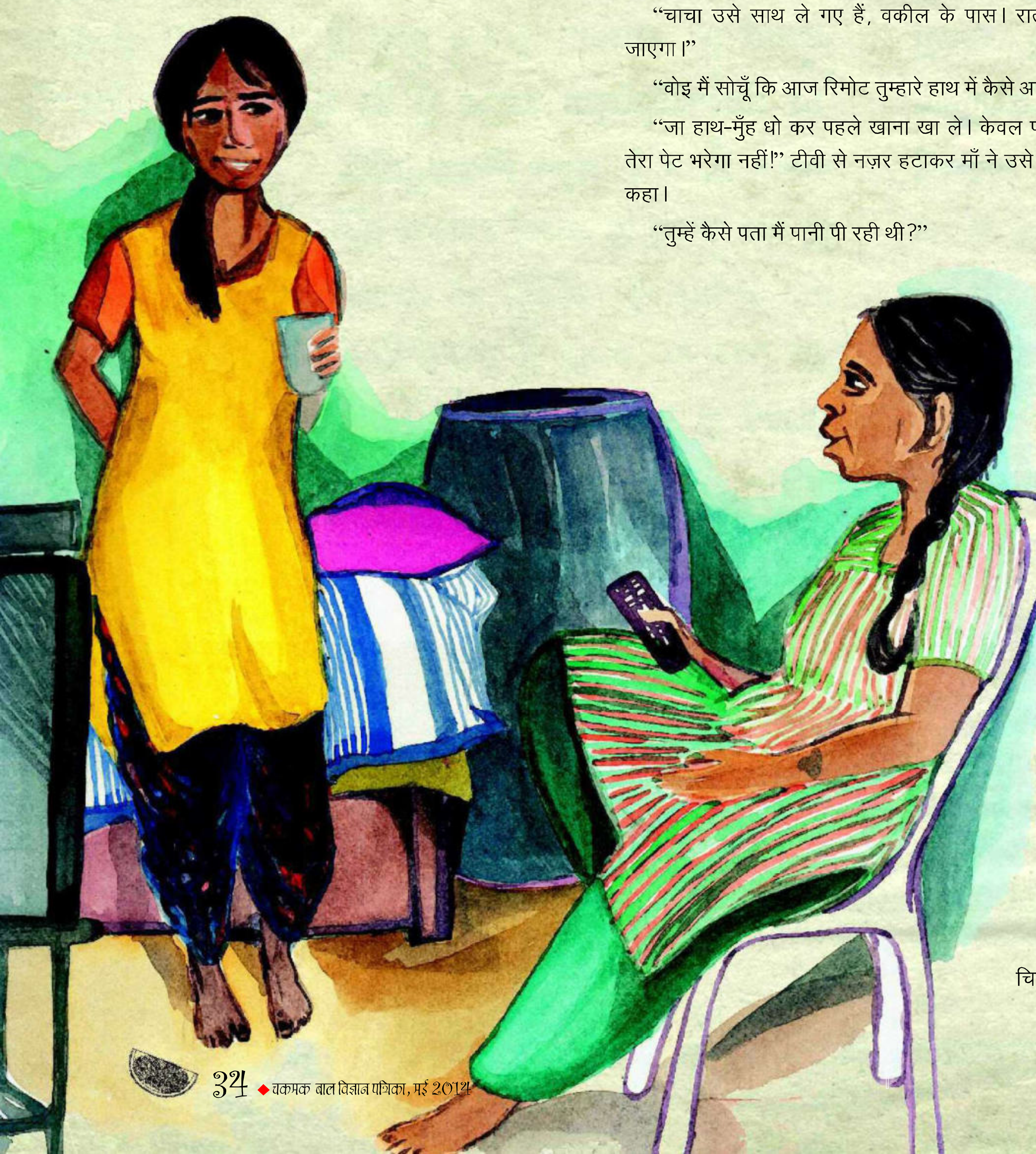

चित्र : कनक

"सुना मैंने। गटागट-गटागट। पूरे दिन पानी नहीं मिलता क्या?"

"अरे, ये यूनीवर्सिटी में साफ वाला गर्ल्स टॉयलेट कहाँ है मैं पता नहीं लगा पाई। इसलिए मैं सुबह ज़्यादा पानी नहीं पीती। बार-बार जाना पड़े तो?" कहते हुए वो उठी और वॉश बेसिन की ओर चल दी।

अभी वो हाथ धो ही रही थी कि उसका फोन बज उठा। फोन नया था। उसके भाई ने दिया था – अपनी पहली कमाई से। उसके लिए फोन और माँ के लिए रेशमी साड़ी।

"हाँ... नहीं... मैं बस अभी आई ही हूँ। नहीं... प्लॉन पक्का है। प्रेमा भी आ रही है। वो कह रही थी कि वो हम दोनों को बैठाकर ले जाएगी। पर मैं अपना स्कूटर भी लाना चाहती हूँ..." "अरे कहा तो... मैं बस अभी घर में घुसी ही हूँ। वो ना नहीं कहेंगी। और वैसे भी मैं उनसे पूछ भी चुकी हूँ.... क्यों?" फोन को अपने कान के नीचे दबाए-दबाए वो अपने लिए खाना परोसने लगी... "उनसे कह दे ना कि हम बहुत सारे लोग हैं...." "हाँ, तीन-चार लोग बहुत सारे ही होते हैं। और कोई कर क्या लेगा?" अब वो रसोई से बाहर आकर सोफे पर बैठ गई थी और खाते-खाते बोली, "अकेले का क्या मतलब है?... तू उन्हें कुछ भी कह दे, झूठ...." यह आखरी वाक्य बोलते-बोलते उसने माँ की ओर देखा। प्लेट नीचे रखी और बाहर गैलरी में चली गई। वहाँ थोड़ी देर फुसफुसाती आवाज़ में बातें करती रही। जब अन्दर आई तो माँ ने पूछा, "क्या हुआ?" "अरे, मीनू के मम्मी-पापा उसे नाटक देखने के लिए आने नहीं दे रहे हैं। वो कह रहे हैं कि वो जगह बहुत दूर है और लड़कियों का इतनी दूर अकेले जाना ठीक नहीं। और फिर उन्हें यह भी डर है कि वहाँ जाने कैसे-कैसे लोग आएँगे।" प्रीति माँ की ओर देखती हुई बोली, "शुक्र है कि तुम उन जैसी नहीं हो।" और वो फिर खाने में लग गई।

"मुझे मस्का मत लगा रे!" माँ मुस्कुराते हुए बोलीं। "मुझे भी तुम्हारा ये अकेले जाने का आइडिया कुछ खास अच्छा नहीं लग रहा।"

"क्यों? यह बहुत ही बढ़िया नाटक है माँ। टीचर कह रही थीं कि हमें इसे तो देखना ही चाहिए, हर हालत में। फिर जाने कभी मौका मिले, ना मिले।"

"तो फिर खुद क्यों नहीं ले जातीं वो तुम्हें?"

"हमें ले जाना उनका काम नहीं है माँ! पर वो भी वहाँ आएँगी। अब छोड़ो भी, कल तो तुमने हाँ कह दिया था न? अब तुम मना नहीं कर सकतीं।" खाना खत्म कर प्रीति प्लेट उठाकर गैलरी में गई और नल खोलकर बर्तन साफ करने लगी।

अन्दर से माँ की आवाज़ आई, "कब तक वापस आओगी?"

"अरे, बोला तो नौ बजे तक आ जाएँगे ना। प्लीज़ मम्मी, अब तुम मत शुरू हो जाओ।" प्रीति माँजने से पहले एक-एक कर बर्तनों को पानी से खँगाल रही थी।

"मैं प्रणव को बोलूँ? वो ले जाएगा तुम लोगों को।"

"पर क्या वो आएँगे?" प्रेशर कुकर में पानी भरकर उसे भीगने के लिए रखते हुए प्रीति ने पूछा। उसे वो आखिर में साफ करेगी। उसके अन्दर ही अन्दर ढ़ेर सारे गुणा-भाग चल रहे थे... अगर उसका भाई साथ चलता है तो मीनू के माँ-पापा उसे जाने के लिए हाँ कह देंगे और फिर उन्हें घर भागने की ऐसी जल्दी भी नहीं होगी। नाटक के बाद थोड़ी देर रुक कर वे नाटक के कलाकार वगैरह से मिल भी सकते हैं।

माँ फिर से बोलीं, "उसे अपने साथ ले जाओ, इस बहाने उसका भी घूमना हो जाएगा। बोर होता है पूरा दिन घर पर अकेला। उसके कोई यार-दोस्त भी तो नहीं हैं यहाँ।" पिछले पाँच सालों से उसका भाई घर से बाहर था। इंजीनियरिंग की पढ़ाई के सिलसिले में। और अब बैंगलौर के पास किसी जगह अपनी फाइनल इंटर्नशिप कर रहा था। अभी कुछ दिनों के लिए घर आया हुआ था क्योंकि जायदाद के कागज़ातों पर चाचा को उसके दस्तखत चाहिए थे।

"ठीक है। वो बोर हो रहे हैं तो चलें हमारे साथ। पर हम अकेले भी जा सकते हैं।"

"हाँ भई जा तो तुम लोग कहीं भी सकते हो पर साथ कोई हो तो अच्छा ही है।"

"मीनू और प्रेमा हैं तो साथ में!"

"तू जानती है ना मेरे कहने का मतलब।" माँ ने कहा। "वैसे भी कभी रोका है तुझे? पूरी आज़ादी तो दे रक्खी है। सब कुछ तो करने देती हूँ।"

"आज़ादी दी है," सुनकर प्रीति ने मुँह बनाया। इन शब्दों से उसे हमेशा ही बहुत चिढ़ होती। लेकिन उसने कुछ कहा नहीं।

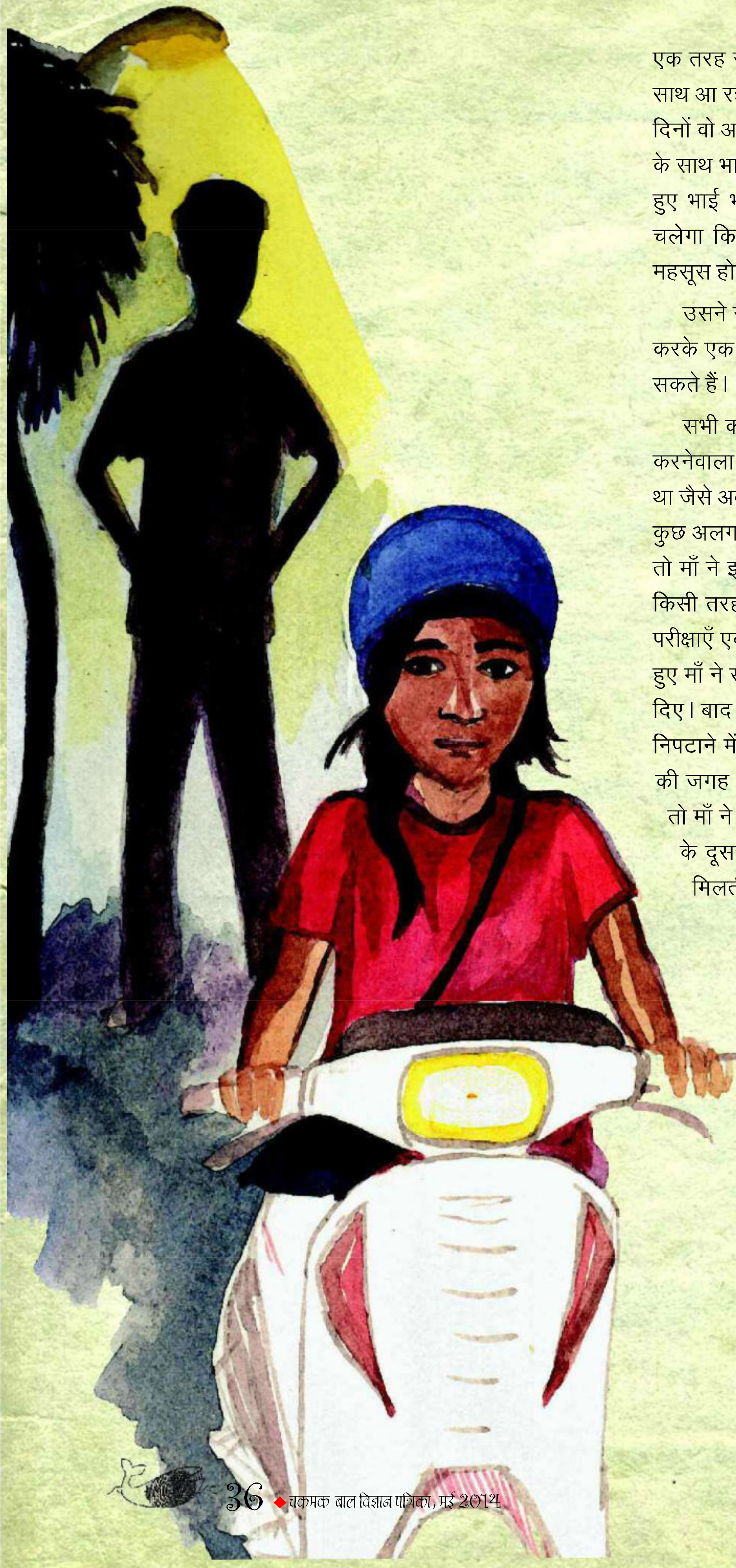

एक तरह से वो खुश ही थी कि उसका भाई भी नाटक देखने उनके साथ आ रहा है। अच्छा है उनके साथ समय बिताने को मिलेगा। इन दिनों वो अपने भाई से काफी दूरी महसूस कर रही थी। अपने दोस्तों के साथ भाई का होना उसे अच्छा लगेगा। उसके साथ नाटक देखते हुए भाई भी उसकी दुनिया का हिस्सा बन पाएँगे। उन्हें भी पता चलेगा कि उसे क्या अच्छा लगता है। उसे अचानक बहुत खुशी महसूस होने लगी।

उसने नल चालू किया और बर्तन धोने लगी। वो शीतल को फोन करके एक और टिकट लेने को कह देगी। पैसे तो सुबह भी दिए जा सकते हैं।

सभी को उसका भाई बड़ा पसन्द आता था। हमेशा हँसी-मज़ाक करनेवाला। चुटकुले वगैरह सुनानेवाला। पर जाने क्यों लगने लगा था जैसे अब भाई की ज़िन्दगी उसकी और उसकी माँ की ज़िन्दगी से कुछ अलग-सी हो गई है। तीन साल पहले जब उनके पापा गुज़रे थे तो माँ ने इस बात का पूरा ख्याल रखा कि इससे भाई की पढ़ाई में किसी तरह की रुकावट ना आए। जब पापा खत्म हुए तो भाई की परीक्षाएँ एकदम नज़दीक थीं। सारे रीति-रिवाज़ों को ताक पर रखते हुए माँ ने सारे कर्मकाण्ड तेरह की बजाए चार ही दिनों में पूरे करवा दिए। बाद में पापा के ऑफिस और बैंक से सम्बन्धित सारे कामों को निपटाने में प्रीति ने ही माँ की मदद की। और जब ऑफिस में पापा की जगह घर के किसी एक व्यक्ति को नौकरी मिलने की बात हुई तो माँ ने यह नौकरी खुद कर ली। इसी से भाई की फीस और घर के दूसरे खर्च पूरे होते। प्रीति को अपने कॉलेज से स्कॉलरशिप मिलती थी और जल्दी ही उसे एक कोचिंग सेंटर में काम भी मिल गया। अब घर की आर्थिक स्थिति अच्छी होने लगी थी। और अब तो उसके भाई को भी कुछ पैसे मिलने लगे थे। माँ ने ज़ोर दिया कि भाई अपनी कमाई अपने खर्चों के लिए ही रखे।

प्रीति की कोचिंग क्लास सुबह होती और फिर वो वहीं से सीधे यूनीवर्सिटी चली जाती। और शाम होते-होते ही घर आ पाती। उस दिन वो घर आई तो भाई रिमोट हाथ में लिए सोफे पर सो रहे थे। "ये अभी तक सोए क्यों पड़े हैं?" उसने माँ से पूछा। "अब तक तो इन्हें तैयार हो जाना चाहिए था। पाँच तो बज ही चुके हैं।"

"उठाने ही वाली थी। फिर सोचा चाय के साथ उठा दूँगी। तेरी भी बनाई है, तू तैयार हो। खाना खा तब तक वो भी तैयार हो जाएगा।" जब प्रीति मुँह-हाथ

धोकर, कपड़े बदलकर आई तो भाई को चाय पीते देखा। "जाओ जल्दी तैयार हो जाओ। हमें जल्दी निकलना है।"

"चिल्ला क्यों रही है? ऐसी भी क्या जल्दी है?" भाई ने थोड़ा आलस से भरकर कहा। और सोफे पर पैर पसारकर बैठ गए।

प्रीति उन्हें घूरती रही।

"ये इतनी चिड़चिड़ी कब से हो गई है?" उसने माँ से मुस्कुराते हुए पूछा। वैसे तो वो अपने भाई को काफी पसन्द करती थी पर उसकी यह आदत उसे कभी अच्छी नहीं लगी – हर काम को अपनी सहूलियत से करना।

खैर, भाई ने चाय खत्म की और तैयार होने के लिए उठे। प्रीति जल्दी-जल्दी खाना गटक रही थी। "जल्दी करो हमें देर हो जाएगी।" भाई के पास से गुज़रने पर उसने कहा। "ठीक है... ठीक है... एक नाटक ही तो है!" वो अपनी बाँह प्रीति के गले में डालते हुए बोला।

"यह सिर्फ कोई एक नाटक नहीं है बल्कि एक बहुत ही खास नाटक है।" अब उसे गुस्सा आ रहा था।

पर अभी वो लड़ाई के मूड में नहीं थी इसलिए खाना खत्म करते ही उसने अपना बैग उठाया और बाहर निकल गई। "जल्दी आओ। मैंने प्रेमा को मिस्ड कॉल दे दिया है। वो मीनू के घर के पास हमारा इन्तज़ार कर रही होगी।" दरवाज़े से बाहर निकलते हुए उसने कहा।

बाहर वो अपने स्कूटर के पास उसका इन्तज़ार करने लगी। भाई को इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला मिलने के एक महीने पहले ही उसके पिता ने लोन लेकर उन्हें एक मोटर साइकिल दिलाई थी। उम्र होने पर उसे भी एक स्कूटर दिलाने का वादा किया था। माँ को वो वादा याद था। उन्होंने स्कूटर की शुरुआती रकम दी। प्रीति ने कहा कि बाकी की किश्तें वो अपनी कोचिंग की कमाई से भरेगी। स्कूटर देखने में बहुत अच्छा था। उसे पहले-पहल चलाते हुए मिली आज़ादी और आत्मनिर्भरता की खुशी अब तक खत्म नहीं हुई थी। उससे सब कहते थे कि वो गाड़ी बड़े अच्छे से चलाती है।

भाई के बाहर आने तक का समय उसे बहुत लम्बा लगा। "अब चलो भी," उसने स्कूटर पर बैठते हुए कहा। वो इन्तज़ार कर रही थी कि भाई बैठे तो वो स्कूटर का स्टार्ट वाला बटन दबाए।

"मुझे चलाने दे।" पीछे-से आवाज़ आई।

"क्या?" कहते हुए उसने गरदन घुमाई तो देखा कि भाई चाबी लेने के लिए हाथ बढ़ाए हुए था।

"गाड़ी मैं चलाऊँगा। तू पीछे बैठ।"

"नहीं, मैं तुम्हें बैठाकर ले जाना चाहती हूँ।"

"फिर कभी। अभी मैं चलाऊँगा।"

"नहीं, यह मेरी गाड़ी है।" अब तक उसे लग रहा था कि उसका भाई मज़ाक कर रहा है लेकिन अब वो समझ गई कि वो गम्भीर है। उसके अन्दर गुस्से की एक लहर दौड़ गई।

"इतनी छोटी-सी चीज़ पर ज़िद क्यों कर रही है। चल मुझे चलाने दे।"

"जब बात इतनी ही छोटी है तो तुम क्यों नहीं पीछे बैठ जाते। फिर चले चलते हैं।"

"तो फिर मैं नहीं आ रहा।"

"क्या?"

"मैं तेरे पीछ बैठकर नहीं जाऊँगा।"

"देखो, वैसे ही बड़ी देर हो गई है। मीनू और प्रेमा पन्द्रह मिनट से इन्तज़ार कर रही होंगी... चुपचाप बैठ जाओ। लौटते समय तुम चला लेना।" अब उसकी आवाज़ में थोड़ी नरमी थी।

"नहीं, तेरे पीछे बैठने में मुझे शर्म आएगी।"

तभी प्रीति के दिमाग में कुछ कौंधा। उसने सामने देखा, गाड़ी स्टार्ट की और चली गई।

अभी जो हुआ उस पर उसे यकीन ही नहीं हो रहा था। ऐसी सड़ी-सी बात पर झगड़ा! हो सकता है वो आना ही ना चाहता हो। गुस्से से निकले आँसुओं से उसकी आँखें जलने लगी थीं। और उसके गाड़ी चलाते ही वे उड़कर उसके बालों में चले गए। वो सीधे वहीं रुकी जहाँ मीनू और प्रेमा उसका इन्तज़ार कर रही थीं। "इतनी देर क्यों हो गई?" प्रेमा ने पूछा।

"और तेरा भाई कहाँ है?" खाली सीट देखते हुए मीनू बोली। धूप में खड़े रहने से उसका चेहरा लाल पड़ गया था फिर भी प्रीति से उसके चेहरे का मेकअप छिपा न रहा।

"मैंने उन्हें घर पर ही छोड़ दिया।"

"क्या? क्यों?"

"लेकिन मेरी मम्मी तो सोच रही हैं कि वे हमारे साथ आ रहे हैं तभी तो उन्होंने मुझे आने दिया।" मीनू थोड़ा घबराते हुए अपनी गली की ओर देखते हुए बोली। जैसे वो तय नहीं कर पा रही हो कि अब इन लोगों के साथ जाए या वापिस घर चली जाए।

"तो फटाफट यहाँ से निकलते हैं, इससे पहले कि उन्हें पता चले कि वे नहीं आए हैं।" प्रीति जल्दी मचाती हुई बोली। ऑडिटोरियम वाले इलाके में उनका जाना कम ही होता था इसलिए सड़कें बहुत जानी-पहचानी नहीं थीं। और उसका पूरा ध्यान सही जगह मुड़ने पर था।

"हुआ क्या?" प्रेमा ने पूछा जब वो स्कूटर खड़ाकर ऑडिटोरियम की ओर जा रहे थे। "वे मेरे पीछे बैठना नहीं चाहते थे तो मैंने उन्हें घर पर ही छोड़ दिया और आ गई।"

"सिर्फ इतनी-सी बात के लिए तूने उन्हें छोड़ दिया?" मीनू ने पूछा। "मेरी मम्मी क्या कहेंगी जब उन्हें पता चलेगा कि हम अकेले ही गए थे।"

"उन्हें बताने वाला कौन है? तू?" प्रेमा थोड़ा उतावली में बोली। फिर प्रीति की ओर मुड़ते हुए उसने पूछा, "उन्होंने सच में तेरे पीछे बैठने से मना किया?" प्रीति ने हाँ में सिर हिलाया। उसे यह सोचकर अच्छा नहीं लग रहा था कि उसके भाई को एक लड़की के पीछे बैठना शर्म वाली बात लग रही थी। उसका भाई इतना दकियानूसी कैसे हो सकता है! यह तो बड़ी बेवकूफी भरी बात है। ऐसे लड़कों पर तो वो हँसा करती थी और यहाँ खुद उसका भाई ऐसी बात कर रहा है।

"और हम सब समझते थे कि वे बहुत भले हैं।"

"वो तेरे पीछे नहीं बैठा इसका मतलब यह नहीं हुआ कि वो अच्छा नहीं हैं।" मीनू ने प्रीति को घूरते हुए कहा।

"बिलकुल, इसका मतलब यही है कि वो अच्छे नहीं हैं और मतलबी भी हैं।" प्रीति ने कहा। एक बार फिर वो रुआँसा-सा महसूस कर रही थी और अपने भाई के बरताव पर उसे गुस्सा भी आ रहा था। कितनी छोटी-सी बात पर वह एक अच्छी-खासी शाम को बरबाद करने पर तुल गया था – वह शाम जिसका उसे कितना इन्तज़ार था।

"पर हो क्या जाता अगर तू उसे गाड़ी चलाने देती तो?"

"वो मेरी गाड़ी है मीनू! मैं उन्हें अपने साथ ले जाना चाहती थी।

उन्हें अपनी ड्राइविंग दिखाना चाहती थी। मुझे स्कूटर मिलने के बाद यह पहला ही मौका था जब हम साथ जाने वाले थे।"

मीनू चुप रही फिर बुदबुदाई, "मैंने फालतू ही इतना सजना-धजना किया?"

"क्या?" प्रीति और प्रेमा दोनों ही उसे घूरती हुई बोलीं, "तो क्या उनके लिए था यह सारा मेकअप?"

"नहीं, चुप कर।" मीनू उनसे नज़र बचाते हुए आगे निकल गई।

"तू उन्हें पसन्द करती है? यार इसका तो मुझे ज़रा भी अन्दाज़ा नहीं था! पर अब तो तू जान गई है न कि वे कैसे हैं! सो अब उसके लिए ट्राइ मत मार!"

"हाँ, अगर अपनी ही गाड़ी पर हमेशा पीछे बैठने में ही तुझे सुख मिलेगा तो बेशक बात आगे बढ़ाई जा सकती है?" प्रेमा ने चुटकी लेते हुए कहा।

"चुपकर!" मीनू का चेहरा लाल हो गया था लेकिन वो भी दबी हुई हँसी हँस रही थी।

ऑडिटोरियम के दरवाज़े पर शीतल पाँच टिकिट लिए खड़ी थी।

"क्या हुआ? तेरा भाई कहाँ है?"

"वे तो पीछे छूट गए!" तीनों ने एक सुर में कहा और खी...खी कर हँसने लगीं।

शीतल उन्हें घूरती रही।

"चल पहले अन्दर चलें, फिर बताते हैं।"

"और इस पाँचवें टिकिट का क्या करें?"

"इसे बेच देते हैं।" प्रेमा ने कहा और टिकिट खिड़की की ओर मुड़ गई। "तुम लोग जाओ और सीट सम्भालो। मैं उसके साथ आऊँगी।" कहते हुए प्रीति प्रेमा के पीछे भागी।

"चल, तब तक मैं तुझे सारी कहानी सुनाती हूँ।" मीनू ने ठण्डी साँस भरते हुए कहा।

"तूने मेकअप किया है?" शीतल ने उसके चेहरे को देखते हुए कहा।

"तो क्या? हर कोई मेरे मेकअप के पीछे पड़ा है!"

जब तक प्रीति और प्रेमा वापिस आए शीतल प्रीति के पीछे छूटे भाई के बारे में सोचते हुए हँसे जा रही थी।

प्रीति मीनू की बगल में बैठी और फुसफुसाई, "जो भी हुआ उसके लिए सॉरी यार..." वो अपनी हँसी दबाने की कोशिश कर रही थी। मीनू ने उसे देख मुँह बना लिया। "अगर तेरे मम्मी-पापा ने पूछा तो क्या बोलेगी?" अभी तक वो मीनू के डर को लेकर उसे छेड़ रहे थे लेकिन प्रीति जानती थी कि यह डर असली है।

"क्या तू उन्हें बताएगी कि हम अकेले आए थे?"

"नहीं।" मीनू बोली।

"तो तू झूठ बोलेगी?"

"झूठ क्यों बोलूँगी? मैं क्या अकेली आई हूँ? हम चार लोग हैं और अगर उन्होंने खासतौर से उनके बारे में पूछा तो कह दूँगी कि कुछ ऐसा हुआ कि वो आ नहीं पाए और मुझे यह मालूम ना था। और इसमें मैं क्या कर सकती थी? बताओ क्या मैं कुछ कर सकती थी?" मीनू की आँखों में थोड़ा गुस्सा था। प्रीति समझ नहीं पा रही थी कि यह गुस्सा उसके माँ-पापा के कड़े नियम-कायदों के कारण है या फिर उसके भाई को ना लाने के कारण!

मीनू ने उसका हाथ दबाया और बोली, "मैनेज कर लेंगे... चिन्ता न कर यार फालतू में।" ऐसा कहकर वो फिर दबी हँसी हँसने लगी और बोली, "बस अब तो यही दुआ करो कि लौटते समय कोई हमारा पीछा ना करे। अगर किसी ने घर तक मेरा पीछा किया या कुछ और बुरा हुआ तो बड़ी मुश्किल हो जाएगी।"

"सब कुछ बुरा आज ही होगा क्या?" शीतल ने

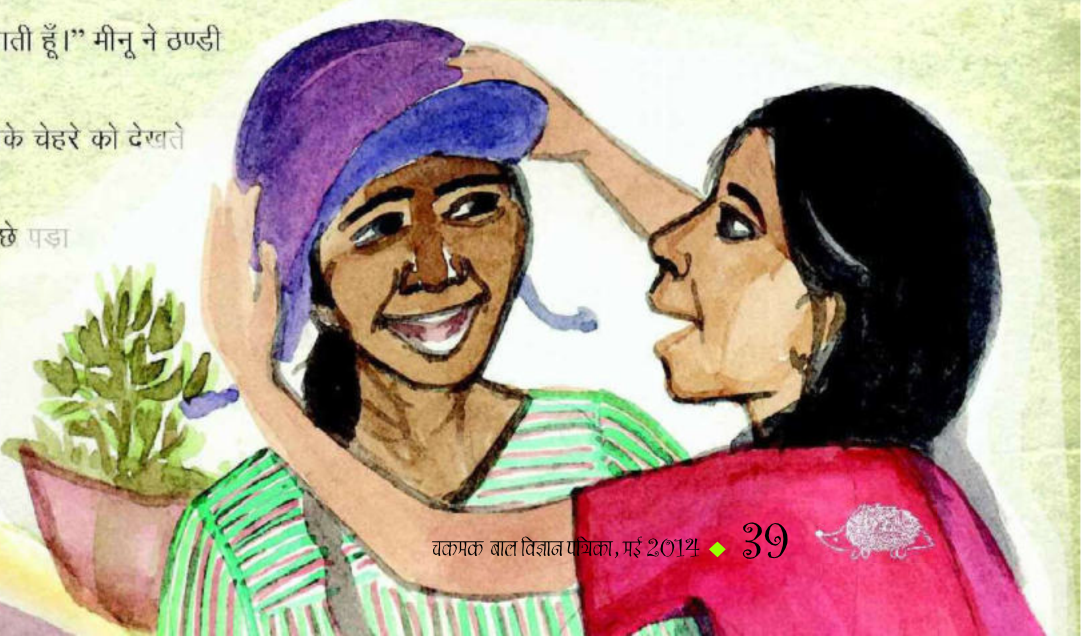

हँसते हुए एतराज़ जताया।

"तू जानती है यार अभी हम सब किस मूड में हैं। अगर लौटने में किसी ने हमें परेशान करने की कोशिश की तो उसकी शामत आ जाएगी।"

जैसे ही घण्टी बजी सब चुप हो गए। नाटक शुरू हो गया। धीरे-धीरे वो पूरी तरह नाटक में खो गए। एक खास किरदार निभाने वाले एक्टर से तो प्रीति को रश्क हो रहा था। वो सोच रही थी काश उसकी जगह मैं होती!

कुछ देर के लिए वो पीछे छूटे भाई को भूल चुकी थी।

उनके बगल में बैठे दो लड़के इंटरवल के दौरान उनसे थोड़ा दोस्ती करने की कोशिश कर रहे थे पर लड़कियाँ उनसे रुखाई से पेश आ रही थीं। कौन जाने लड़के इस बात का क्या मतलब निकालेंगे! ऐसे मौकों पर प्रीति को बड़ा बुरा लगता कि उसे और उसके दोस्तों को हमेशा सर्तक रहना पड़ता है। अपनी बात मनवाने के लिए उन्हें कई तरह के समझौते करने पड़ते हैं यह वो जानती थी लेकिन फिर भी उसे उम्मीद थी कि एक दिन ऐसा आएगा जब किसी के मुस्कुराने का जवाब मुस्कुराकर देना या किसी से लिफ्ट लेना मुसीबत को गले लगाना ना होगा। और अगर इतना भी हो गया तो ज़िन्दगी थोड़ी तो आसान हो ही जाएगी।

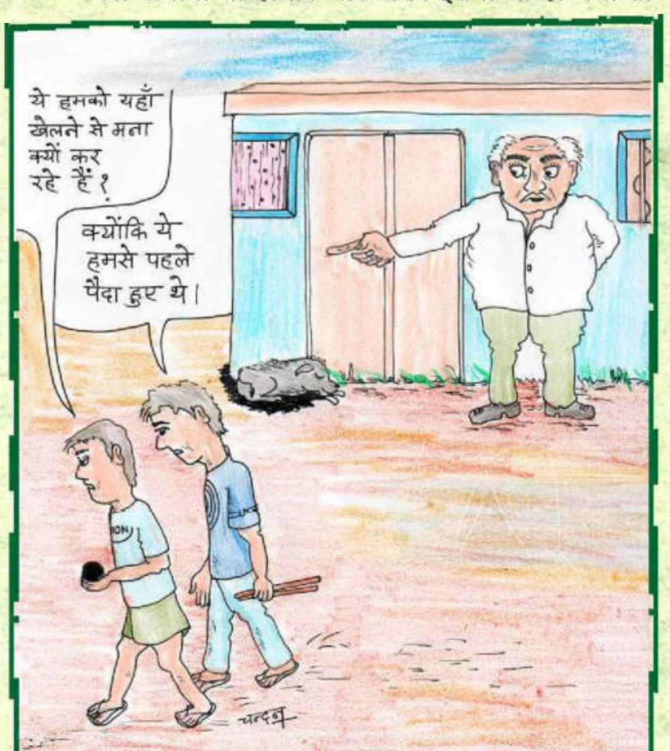

नाटक खत्म होने के बाद वो कुछ देर उसके बारे में बातें करती रहीं। अपनी क्लास के कुछ और लोगों से मिलीं। प्रीति उनके साथ स्टेज के पीछे जाना चाहती थी। अगर उनकी टीचर वहाँ हुईं तो कलाकारों से भी मिला जा सकता था।

"यार वैसे ही बहुत टाइम हो गया है।" मीनू बोली। "मैं नहीं चाहती कि मेरे मम्मी-पापा रास्ते पर खड़े होकर मेरा इन्तज़ार करें। वैसे ही इतना कुछ हो चुका है।"

"हाँ, हाँ चल चलते हैं।" प्रीति के पीछे बैठते हुए शीतल ने कहा। शीतल का घर पास ही में था। उसे छोड़ने के बाद प्रीति को बाकी रास्ते अकेले ही जाना था। एक मोड़ पर उसने मीनू और प्रेमा को बाय कहा और बोली, "मीनू, फोन पर बताना कि घर पर कैसा रहा?" मीनू ने हाँ में सिर हिलाया। अब वो पहले से कुछ कम परेशान लग रही थी। अब जो होगा देखा जाएगा!

जैसे ही घर पास आने लगा प्रीति को थोड़ी चिन्ता होने लगी कि माँ क्या कहेंगी? और अब उसे फिर से अपने भाई का सामना करना होगा। उनसे वो क्या कहेगी? इस घटना से उन दोनों के बीच के अटपटेपन को वो अभी से महसूस कर पा रही थी।

"तेरे पीछे बैठना मुझे बेवकूफी लगेगा" यह कोई तर्क हुआ भला! यह सोचकर वो एक बार खुलकर हँसी और फिर उसने गाड़ी तेज़ कर की।

दरवाज़ा खोलते ही सोफे पर बैठे टीवी देखते भाई दिखे। उसने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया और सीधे किचन में चली गई। माँ रसोई साफ कर रही थीं। प्रीति माँ की मदद करने लगी।

"रहने दे, पहले खाना खा ले। मैं तेरा ही इन्तज़ार कर रही थी।"

"और वो?" प्रीति ने दूसरे कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा। "उसने खा लिया?" माँ बोलीं।

क्या माँ कुछ कहना चाह रही थीं? खाना शुरू करते ही माँ नाटक के बारे में पूछने लगीं। भाई चुप्प बना रहा। माँ उसे बातचीत में शामिल करने की पूरी कोशिश करती रहीं, पर वो चुप ही रहा। प्रीति अभी भी माँ के कुछ कहने का इन्तज़ार कर रही थी। उसे खुद भी पता नहीं था कि वो बात को कहाँ से शुरू करे और कैसे, इसलिए वो चुप रही।

आखिर माँ ने पूछ ही लिया, "उस एक्स्ट्रा टिकिट का क्या किया?"

बोलीरंगोली

चुनिंदा सतरह चित्र

1

2

3

4

5

6

7

8

9

10

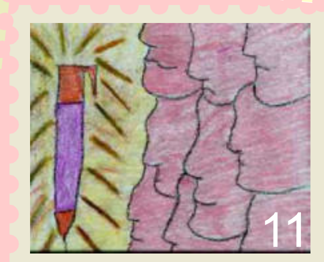

11

12

13

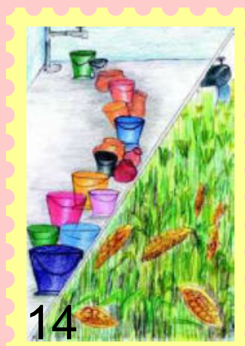

14

15

16

17

1. अविरल माकन, तीसरी, डीएवी, गुड़गाँव / 2.अलका, पाँचवीं, अपना स्कूल, धामीखेड़ा / 3.संगीता, पाँचवीं, अपना स्कूल, धामीखेड़ा / 4.वीना, नवमी, मंज़िल, दिल्ली /5.रिया छेड़ा, छठीं, शिशुवन, मुम्बई / 6. ज्ञानवी जैन, पहली, सत्यसाईं विद्याविहार, इंदौर / 7. रोशनी कुंडु, आठवीं, एसओएस बालग्राम, भोपाल / 8.रिदम जिन्दल, पाँचवीं, डीएवीपीएस, गुड़गाँव / 9. देवाशीष नेगी, आरुषि, भोपाल /10. कोकिला देवांगन, तीसरी, एपीएफ स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़ / 11.करिश्मा, बारह वर्ष, दिगन्तर, जयपुर /12.आरती कुशवाह, सातवीं, कर्त्तव्य, आगरा /13.रिशिकेष, पाँचवीं, डीपीएस, पटना / 14.सिद्धांतराज वर्मा, नवमी, किलकारी बालभवन, पटना / 15.अनिमेष, तीसरी, डीएवी, गुड़गाँव / 16.आयुष प्रसाद, छठीं, मंज़िल, दिल्ली /17.दीपांकर लोंधे, कच्छ, गुजरात

चिड़िया के बच्चे

कुमारन पेरिया

सब बच्चे खेत में जमा हो चुके थे। अप्पू भी वहाँ पहुँचने के लिए उतावला हो रहा था। उसे ऐसी शामों का बड़ा इन्तज़ार रहता। सबके साथ खेलने में उसे खूब मज़ा आता। पर वो अभी के अभी बाहर नहीं जा सकता था। अभी तो उसे कई सारे काम करने थे। पानी भरना था। चूल्हा जलाने के लिए लकड़ियों का इन्तज़ाम करना था। छोटे भाई-बहन को नहलाना था।

उसकी माँ शहर में मज़दूरी करने जाती है। ईंट-सीमेंट से भरी भारी तगारी को सिर पर लादकर उन्हें बिल्डिंग की ऊपरी मंज़िल तक ले जाना होता है।

अपने सारे काम निपटाकर अप्पू खेत की ओर दौड़ पड़ा। सारे बच्चे गोल-घेरे में बैठे थे। बीच में आग जल रही थी। उसमें एक चिड़िया भूनी जा रही थी। जब उसे बाँटा जा रहा था तो अप्पू को भी उसका एक हिस्सा मिला। बहुत स्वादिष्ट! "कौन-सी चिड़िया थी ये?" उसने पूछा।

"अरे, वही अपनीवाली चिड़िया!" बालन तुरन्त बोला।

अप्पू को महसूस हुआ जैसे कोई बहुत पैनी-सी चीज़ उसके दिल को चीर रही है। जैसे पेट में पड़ा माँस का वो टुकड़ा चुभ रहा था उसे। वो उस चिड़िया को रोज़ देखता था। उसने उसे घोंसला बनाते हुए भी देखा था। फिर अपने बच्चों के लिए खाना ले जाते हुए भी वो रोज़ दिख जाती थी। उसकी आँखों के सामने उस पक्षी का हरा रंग घूम गया। पाम के पत्ते जैसी उसकी पूँछ भी। वो उसके घोंसले की ओर दौड़ पड़ा। वहाँ एकदम अँधेरा था। एकदम सन्नाटा। कौन शोर मचाता! हो सकता है बच्चे इस स्थिति में ही न हों। पता नहीं वो कब तक अपनी माँ का इन्तज़ार करते रह पाएँगे। माँ जो उनके लिए खाना लेने गई होगी।

अचानक वो मुड़ा और अपने घर की ओर दौड़ने लगा। घर पहुँचते ही उसने अपने भाई-बहन को अपनी बाँहों में भर लिया और वो तीनों बरामदे में बैठ गए।

तीन जोड़ी आँखें अँधेरी गली पर टिकी थीं माँ के इन्तज़ार में!

साभार - यूरेका
मलयालम से अनुवादः अनु एलैक्सज़ेंडर

चित्रः दिलीप चिंचालकर

चित्र पहेली

► बाएँ से दाएँ ▼ ऊपर से नीचे

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / 261 / भोपाल / 2012-14

रँगीली-छबीली बकरियाँ

प्रभात

काली-पीली रँगीली छबीली-सी बकरियाँ
रास्ते में चली चला-चली करतीं,
दूध भरे-हरे देशी आकड़े के पत्ते
उनको चब-चब चबर-चबर चरतीं।

कहीं पे बबूल टूँगे कहीं पे करील चूमे
झाड़ियों को सूँघने की हद कर दी,
कहीं पे टँगाए सींग कहीं पे टँगाए कान
टँगने लटकने की हद कर दी।

घूम लिया रणथम्भौर बकरियों ने
घूमने में सबेरे की शाम कर दी,
सूरज टँगा था वहाँ चाँद लाके टाँग दिया
किसने ये ऐसी घूम-घाम कर दी।

मैं मैं मैं मैं मैं मैं बन्द करो पुकारा गडरिए ने
मैंने अर्र-टर्र को सलाम कर दी,
चुपचाप घर चलो शोर बन्द कर चलो
साँझ ने आवाज़ें सारी जाम कर दी।

खड़बड़-खड़बड़ खदक रही है भूमि
बकरियों ने चाल तालाबेल कर दी,
काँधे धर छागड़ी को माथे धर पागड़ी को
चाल तो गडरिए ने रेल कर दी।

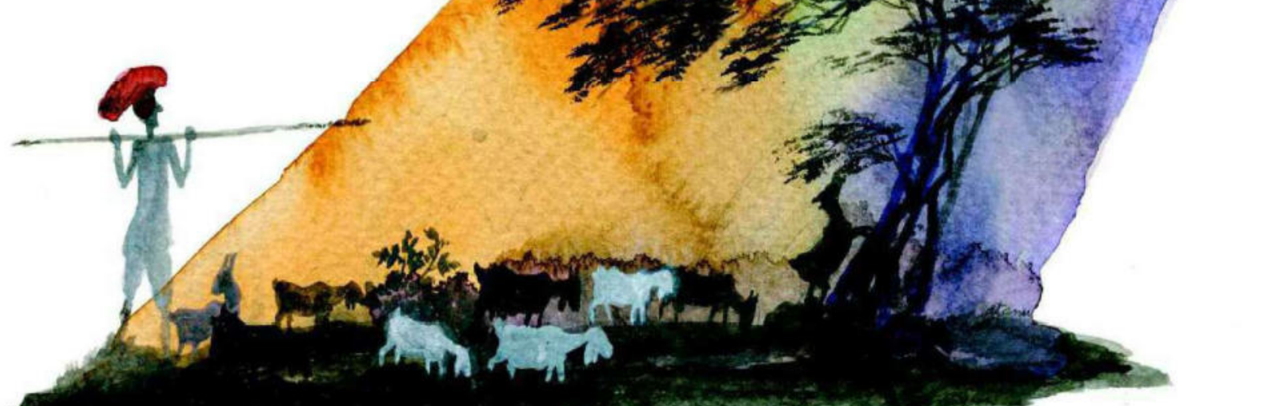

चित्रः अतनु

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोनः 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल